राजस्थान उच्च न्यायालय, जयपुर पीठ

खंडपीठ सिविल रिट याचिका संख्या 179/2010

में

एकलपीठ सिविल रिट याचिका संख्या 6759/2003

राजस्थान राज्य-तहसीलदार चिड़ावा, जिला झुंझुनू अपर कलक्टर, झुंझुनू के माध्यम से।

----अपीलार्थी-प्रत्यर्थी

बनाम

1. पालीराम चैरिटी ट्रस्ट, सूरजगढ़, तहसील चिरावा, जिला झुंझुनू- राधे श्याम अरावती, पावर ऑफ अटॉर्नी स्वर्गीय श्री प्रहलाद राय जी के पुत्र स्वर्गीय श्री प्रहलाद राय जी निवासी चिरावा, जिला झुंझुनूं के माध्यम से।

-----गैर अपीलार्थी-याचिकाकर्ता

2. राजस्थान राजस्व मंडल, अजमेर।

----प्रोफार्मा प्रत्यर्थी

अपीलार्थी की ओर से	:	श्री अनिल मेहता अपर महाधिवक्ता श्री यशोधर पांडे अधिवक्ता, सुश्री अर्चना अधिवक्ता और श्री मेहुल हरकावत अधिवक्ता के साथ।
प्रत्यर्थी संख्या 1 की ओर से	:	श्री महेंद्र सिंह अधिवक्ता श्री सुनील नाथ अधिवक्ता, श्री आकाश श्रीवास्तव अधिवक्ता, सुश्री सेजल शर्मा अधिवक्ता, सुश्री नंदिनी सिंह भाऊन अधिवक्ता, सुश्री पलक सक्सैना अधिवक्ता के साथ।

माननीय न्यायमूर्ति मनिन्द्र मोहन श्रीवास्तव

माननीय न्यायमूर्ति शुभा मेहता

निर्णय

रिपोर्टेबल

1/06/2023

मनिन्द्र मोहन श्रीवास्तव, न्यायमूर्ति

1. यह अपील विद्वान एकलपीठ द्वारा पारित दिनांक 20.08.2009 के आदेश के विरुद्ध

निर्देशित है, जिसके तहत, राजस्व बोर्ड, अजमेर (संक्षेप में 'राजस्व बोर्ड') द्वारा पारित आदेश दिनांक 25.04.2003 को अपास्त करते हुए, प्रत्यर्थी संख्या 1 द्वारा दायर रिट याचिका की अनुमति दी गई है और अपीलार्थियों को निर्देश दिया गया है कि वे विवादित भूमि को प्रत्यर्थी संख्या 1- रिट याचिकाकर्ता-ट्रस्ट के नाम पर तुरंत दर्ज करें, हालांकि, इस टिप्पणी के साथ कि प्रत्यर्थी संख्या 1-ट्रस्ट इसका पालन करेगा। विद्वान एकलपीठ के समक्ष कार्यवाही में दिए गए वचनों को पूरा करें।

2. प्रत्यर्थी संख्या 1- रिट याचिकाकर्ता का मामला यह है कि इसके पूर्ववर्ती सेठ पाली राम और बृज लाल (प्रत्यर्थी संख्या 4 और 5) ने वर्ष 1942 में ठाकुर उवीर सिंह से विषयगत भूमि खरीदी थी जो प्रत्यर्थी क्रमांक 1 (बिसाऊ के ठिकानेदार)के अनुसार रिट याचिकाकर्ता था। प्रत्यर्थी संख्या 1- रिट याचिकाकर्ता के अनुसार, विवाद में भूमि को बाद में सेठ पाली राम और बृज लाल द्वारा प्रत्यर्थी संख्या 1-पालिराम चैरिटी ट्रस्ट के पक्ष में स्थानांतरित कर दिया गया था। इसके अलावा, सेठ पाली राम गायों के लिए एक चारागाह स्थापित करना चाहते थे और पवित्र कर्म अर्जित करने के लिए, सेठ पाली राम ने ठाकुर रघुवीर सिंह से रुपये 17,683/-. के बदले में जमीन खरीदी। बिसाऊ के तत्कालीन ठिकानेदार द्वारा जारी पट्टा (टाइटल डीड) के अनुसार, भूमि का उपयोग केवल गांव के मवेशियों के लिए चारागाह के रूप में किया जाना था। प्रत्यर्थी संख्या 1- रिट याचिकाकर्ता का आगे का मामला यह है कि भले ही भूमि का कुछ हिस्सा कृषि प्रयोजन के लिए उपयोग किया जाना था, तब भी कृषि गतिविधियों से अर्जित आय का उपयोग चारागाह भूमि के लाभ के लिए किया जाना था। यह प्रत्यर्थी संख्या 1- रिट याचिकाकर्ता का मामला भी था, जो तथाकथित पट्टा में निहित विवरण के आधार पर था कि यद्यपि, एक घर बनाया जा सकता था, लेकिन इसका उपयोग केवल ऐसे व्यक्तियों के आवास के उद्देश्य से किया जाना था जो चारागाह भूमि के बाद और आगे की भूमि का उपयोग सेठ पाली राम के व्यक्तिगत उपयोग के लिए नहीं किया जा सकता था।

3. प्रत्यर्थी संख्या 1- रिट याचिकाकर्ता का अगला मामला यह था कि यद्यपि पट्टा ठाकुर रघुवीर सिंह द्वारा सेठ पाली राम के पक्ष में जारी किया गया था, लेकिन भूमि उनके नाम पर परिवर्तित नहीं की गई थी, इसलिए, 1954 तक, भूमि को राजस्व अभिलेखों में शामलात देह (सामान्य भूमि) के रूप में दर्शाया गया था। 1954 में, सेठ पाली राम और बृज लाल ने राजस्व रिकॉर्ड में आवश्यक सुधार के लिए उप मंडल अधिकारी, झुंझुनू

(संक्षेप में 'एसडीओ') के समक्ष एक आवेदन दायर किया। एसडीओ ने इलाके के संख्यादार से रिपोर्ट मांगी और 27.08.1954 को संख्यादार ने अपनी रिपोर्ट एसडीओ को सौंपी, जिसमें कहा गया कि सेठ पाली राम और बृज लाल ने आपके ठिकानेदार से जमीन खरीदी थी और वे पिछले बारह वर्ष से उस पर काबिज हैं। उन्होंने उक्त जमीन के चारों ओर चहारदीवारी तोड़ दी है. भूमि गेरू-भूमि अर्थात चारागाह भूमि रह गई है। कुल भूमि में से 16 बीघे भूमि कृषि प्रयोजन हेतु रखी गयी है। एसडीओ ने तहसीलदार से भी रिपोर्ट तलब की है। तहसीलदार ने 18.09.1954 को अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की जिसमें कहा गया था कि हालांकि भूमि को शामलात (सामान्य भूमि) के रूप में दिखाया गया था, जमीन को पहले सेठ पाली राम और बृज लाल से विचार लेने के बाद ठिकाना बिसाऊ द्वारा बेच दिया गया था। तहसीलदार की रिपोर्ट में दर्शाया गया है कि उन्होंने भूमि का दौरा किया और पाया कि सेठ पाली राम ने भूमि के चारों ओर एक दीवार का निर्माण किया था और भूमि उनके कब्जे में थी। यह भी बताया गया कि गाँव के मवेशी गाँव वालों की भूमि पर बिना कोई कर चुकाए चरते हैं। तहसीलदार ने आगे कहा कि 1942 के पट्टे के अनुसार, भूमि का उपयोग कृषि उद्देश्य के लिए किया जा सकता है, न कि घर बनाने या किसी निजी उपयोग के लिए। इस रिपोर्ट के अनुसार संख्यादार का बयान दर्ज किया गया, जिसने पिछले 12 वर्षों से सेठ पाली राम के कब्जे की जानकारी दी थी। तहसीलदार ने पटवारी से क्षेत्र का एक साइट प्लान भी तैयार करवाया जो उनकी रिपोर्ट का हिस्सा भी बना। पटवारी के मुताबिक जमीन सेठ पाली राम और बृज लाल के नाम दर्ज होनी चाहिए थी। तदनुसार, तहसीलदार ने सिफारिश की कि राजस्व रिकॉर्ड को सही किया जाए और भूमि को सेठ पाली राम और बृज लाल के नाम पर दिखाया जाए। उपरोक्त दो रिपोर्टों के आधार पर, एसडीओ ने 01.11.1954 को एक आदेश पारित किया जिसमें निर्देश दिया गया कि राजस्व रिकॉर्ड को सही किया जाए और भूमि को सेठ पाली राम और बृज लाल के नाम पर दर्ज किया जाए।

4. प्रत्यर्थी संख्या 1- रिट याचिकाकर्ता का यह भी मामला है कि भले ही एसडीओ द्वारा आदेश पारित किया गया था, लेकिन राजस्व रिकॉर्ड में आवश्यक सुधार नहीं किए गए थे। एसडीओ द्वारा पारित आदेश दिनांक 1.1954 के अनुसरण में राजस्व रिकॉर्ड में आवश्यक सुधार करने में इस तरह की निष्क्रियता के कारण, राजस्थान किरायेदारी अधिनियम, 1955 (संक्षेप में '1955 का') लागू होने के बाद राजस्व रिकॉर्ड सही नहीं किए

गए थे। 1980 तक भूमि को शामलात गोचर (सामान्य चारागाह भूमि) के रूप में दर्ज किया जाता रहा। इसके बाद, 16.06.1980 को, राजस्व रिकॉर्ड को सही करने के लिए निपटान अधिकारियों के समक्ष एक आवेदन दायर किया गया, जिसके बाद 28.06.1980 को सहायक भूमि बंदोबस्त द्वारा एक आदेश पारित किया गया। अधिकारी-सह-सहायक भूमि रिकॉर्ड अधिकारी, चिड़ावा, जिला झुंझुनू (संक्षेप में 'सहायक बंदोबस्त अधिकारी') जिसके तहत विचाराधीन भूमि को सिवाई-चक (सरकारी भूमि) के रूप में दर्ज किया गया था। सहायक बंदोबस्त पदाधिकारी ने एसडीओ द्वारा पारित आदेश दिनांक 01.11.1954 को ध्यान में रखते हुए आवश्यक सुधार कर जमीन सेठ पाली राम एवं बृज लाल के नाम पर दर्ज करने का निर्देश दिया.

5. ग्राम जाखोद के ग्रामीणों ने 12.09.1980 को राजस्थान भू-राजस्व अधिनियम, 1956 (संक्षेप में '1956 का अधिनियम') की धारा 82 के तहत एक आवेदन प्रस्तुत किया और प्रार्थना की कि आदेश दिनांक 28.06.1980 को अपास्त कर दिया जाए। उक्त आवेदन को निपटान आयुक्त और भूमि अभिलेख निदेशक, राजस्थान, जयपुर (संक्षेप में 'सेटलमेंट आयुक्त') को स्थानांतरित कर दिया गया था, जिन्होंने दिनांक 07.11.1983 के आदेश के तहत 1956 के अधिनियम की धारा 82 के तहत संदर्भ के लिए आवेदन को खारिज कर दिया था। उपरोक्त आदेश में, अन्य बातों के अलावा, निपटान आयुक्त ने दर्ज किया कि दिनांक 28.06.1980 का आदेश एक अपीलीय आदेश था, इसलिए, या तो अपील को दायर की जानी चाहिए थी या उक्त आदेश के खिलाफ एक पुनरीक्षण याचिका दायर की जा सकती थी। चूँकि न तो पुनरीक्षण, न ही कोई अपील दायर की गई थी, यह माना गया कि संदर्भ के लिए आवेदन विचारणीय नहीं था।

ग्राम पंचायत जाखोद ने दिनांक 07.11.1983 के आदेश से व्यथित होकर अधिनियम 1956 की धारा 75 के तहत न्यू बोर्ड के समक्ष अपील दायर की। राजस्व मंडल ने दिनांक 26.08.1988 के आदेश द्वारा अपील खारिज कर दी। यह भी देखा गया कि यदि ग्राम पंचायत को सहायक निपटान अधिकारी द्वारा पारित दिनांक 28.06.1980 के आदेश से वंचित कर दिया गया था, तो या तो अपील या पुनरीक्षण याचिका दायर की जानी चाहिए थी या मामले को संदर्भित करने के लिए राज्य सरकार से अनुरोध किया जा सकता था। 26.08.1988 को अपील खारिज करने के राजस्व बोर्ड के आदेश को उसके बाद चुनौती नहीं दी गई।

6. पांच वर्ष बाद, 1993 में, तहसीलदार चिड़ावा ने सेठ को पक्षकार बनाने वाले दिनांक 28.06.1980 के आदेश के खिलाफ संदर्भ बनाने के लिए अपर जिलाधीश, झुंझुनू (संक्षेप में 'अपर जिलाधीश') के समक्ष 1956 के अधिनियम की धारा 82 के तहत एक नया आवेदन प्रस्तुत किया। पाली राम, बृज लाल और प्रत्यर्थी संख्या 1- (पार्टी प्रत्यर्थी के रूप में ट्रस्ट) अपर जिलाधीश ने एक पक्षीय आदेश दिनांक 17.07.1993 द्वारा राजस्व मंडल का संदर्भ दिया। सेठ पाली राम या बृज लाल को कोई नोटिस जारी किए बिना और यहां तक कि प्रत्यर्थी संख्या 1-ट्रस्ट पर भी ध्यान नहीं दिया गया, राजस्व मंडल ने दिनांक 06.05.1998 के आदेश के तहत संदर्भ को स्वीकार कर लिया और प्रत्यर्थी संख्या 1- रिट के खातेदारी अधिकारों को अलग कर दिया। याचिकाकर्ता. इसने आदेश दिया कि भूमि को फिर से शामलात गोचराई (सामान्य चारागाह भूमि) के रूप में दर्ज किया जाए। प्रत्यर्थी संख्या 1- रिट याचिकाकर्ता ने राजस्व बोर्ड के समक्ष एक पक्षीय आदेश को अपास्त करने के लिए एक आवेदन दिया, जिसके बाद, दिनांक 20.05.1999 के आदेश के तहत, एक पक्षीय आदेश को वापस ले लिया गया और संदर्भ को राजस्व बोर्ड के समक्ष रखने का निर्देश दिया गया।

दिनांक 25.04.2003 के आदेश के तहत, राजस्व बोर्ड ने संदर्भ को स्वीकार कर लिया और फिर से निर्देश दिया कि रिट याचिकाकर्ता और सेठ पाली राम और बृज लाल का नाम राजस्व रिकॉर्ड से हटा दिया जाए और भूमि को सामान्य सरकारी चारागाह भूमि के रूप में दर्ज किया जाए। इस आदेश से व्यथित होकर, प्रत्यर्थी संख्या 1- रिट याचिकाकर्ता ने रिट याचिका दायर की, जिसे विद्वान एकलपीठ ने दिनांक 8.2009 के आक्षेपित आदेश के तहत अनुमति दे दी, जिसने इस अपील को जन्म दिया गया।

राजस्व विभाग और विद्वान एकलपीठ द्वारा पारित आदेशों की तथ्यता और वैधता पर प्रश्न उठाते हुए, अपीलार्थी-राज्य ने निम्नलिखित प्रस्तुतियाँ की हैं:

(क) यह तर्क दिया गया है कि विचाराधीन भूमि वर्ष 1941-42 में शामलात देह, अर्थात, आम गांव की चरागाह/चारागाह भूमि के रूप में दर्ज की गई थी। भूमि को मवेशियों को चराने के एक विशिष्ट उद्देश्य के लिए पट्टे के माध्यम से इस शर्त के साथ आवंटित किया गया था कि भूमि का उपयोग किसी अन्य उद्देश्य या व्यक्तिगत उपयोग के लिए नहीं किया जाएगा। कोई आवासीय उपयोग नहीं होगा और पंप केवल चारागाह के लिए तैनात किए जाएंगे। 15 बीघे भूमि केयरटेकर के स्व-निर्वाह के लिए और 16 बीघे भूमि गार्ड के स्व-

निर्वाह के लिए उपयोग करने की अनुमति होगी। इस प्रकार, तथाकथित पट्टा केवल गाँव के मवेशियों के चरागाह के रूप में उपयोग के लिए था। कथित पट्टे की टाइप की गई प्रति यह नहीं दर्शाती है कि यह एकमुश्त बिक्री थी या कोई विरासत योग्य या हस्तांतरणीय अधिकार हस्तांतरित किया गया था। कथित आवंटन पट्टे में कोई तिथि या अवधि अंकित नहीं है। जयपुर राज्य से कोई अनुमति नहीं ली गई। रघुवीर सिंह केवल एक जागीरदार थे और उन्हें शासक की पूर्वानुमति के बिना भूमि बेचने या अलग करने या उस पर खेती की अनुमति देने का अधिकार नहीं था, खासकर जब भूमि मवेशियों के चरने के लिए आरक्षित थी।

(ख) जयपुर के महामहिम महाराजा की सरकार के राजस्व विभाग के आदेश को राजपत्र अधिसूचना दिनांक 08.06.1945 के माध्यम से अधिसूचित किया गया था, जिससे यह स्पष्ट हो गया कि शेखावाटी के ठिकानेदारों द्वारा स्थिति का आज्ञापन अवैध था क्योंकि उनके पास ऐसी कोई स्थिति नहीं थी और महामहिम के स्पष्ट आदेशों के विरुद्ध था। दिनांक 08.06.1945 की अधिसूचना के खंड 36 ने सरकार की उचित मंजूरी के बिना, जागीर का हिस्सा बनने वाली कृषि भूमि के हस्तांतरण को भी प्रतिबंधित कर दिया। इसलिए, कानून के तहत जागीरदार के पास राज्य की पूर्व अनुमति के बिना उस भूमि को हस्तांतरित करने का कोई अधिकार नहीं था जो एक चरागाह भूमि थी।

(ग) आगे यह तर्क दिया गया है कि जयपुर किरायेदारी अधिनियम, 1945 (संक्षेप में 'एफ 1945') 04.09.1945 को लागू हुआ, जो कृषि किरायेदारी और अन्य मामलों से संबंधित था। 1945 के अधिनियम की धारा 9(i) चरागाह के लिए आरक्षित भूमि पर खातेदारी अधिकार अर्जित करने पर प्रतिबंध लगाती है। यहां तक कि खेतड़ी राजस्व नियमावली की धारा 34 भी भूमि की बिक्री पर रोक लगाती है। उपरोक्त मैनुअल के खंड 35 में आगे प्रावधान किया गया है कि जागीरदारों के पास जागीर भूमि पर कोई नाज़ुल अधिकार नहीं है, जिसका अर्थ है कि उनके पास गैर-कृषि उद्देश्यों के लिए आरक्षित भूमि पर कोई अधिकार नहीं है। इसलिए, 1942 से पहले भी, जागीरदारों के पास कृषि भूमि के प्रबंधन के बहुत सीमित अधिकार थे।

(घ) इसके बाद यह तर्क दिया जाता है कि जयपुर राज्य अनुदान भूमि किरायेदारी अधिनियम, 1947 (संक्षेप में '1947 का अधिनियम') राज्य अनुदान में किरायेदारी से संबंधित कानून को समेकित और संशोधित करने के लिए अधिनियमित किया गया था।

1947 के अधिनियम के प्रावधानों ने चरागाह भूमि पर खातेदारी अधिकारों के खिलाफ विशिष्ट रोक लगा दी।

(ङ) जयपुर भूमि राजस्व अधिनियम, 1947 (संक्षेप में 'जयपुर भूमि राजस्व अधिनियम') को भूमि राजस्व से संबंधित कानून के साथ-साथ राजस्व न्यायालयों के संविधान, शक्तियों और अधिकार क्षेत्र को समेकित करने के लिए अधिनियमित किया गया था। यद्यपि उपरोक्त अधिनियम में राजस्व बोर्ड और अन्य राजस्व अदालतों के निर्माण का प्रावधान था, तथापि, अधिनियम के तहत उपमंडल अधिकारी का कोई न्यायालय नहीं बनाया गया था।

(च) उत्तर प्रदेश के तत्कालीन मुख्यमंत्री श्री गोविंद बल्लभ पंत द्वारा प्रस्तुत जागीरदारी उन्मूलन पर रिपोर्ट में स्पष्ट किया गया कि जागीरें निजी संपत्ति होने के आधार पर जागीरें जागीरदारों की संपत्ति नहीं हैं और इसलिए, बहाली की स्थिति में जागीरदार किसी भी मुआवजे के हकदार नहीं हैं।

(छ) यह तर्क दिया गया है कि राजस्थान भूमि सुधार और जागीर बहाली अधिनियम, 1952 (संक्षेप में '1952 का अधिनियम') 1952 में लागू हुआ। उक्त अधिनियम के 9 के अनुसार, सेठ पाली राम, बृज लाल या इस मामले में उत्तराधिकारी, अर्थात, प्रत्यर्थी संख्या 1- रिट याचिकाकर्ता-ट्रस्ट कोई भुगतान नहीं कर रहे थे, इसलिए, उन्हें किरायेदारों के रूप में नहीं माना जा सकता था। इस प्रकार, उन्हें 1952 के अधिनियम की धारा 9 के तहत खातेदार किरायेदारों के रूप में वर्गीकृत नहीं किया जा सकता है।

(ज) जागीरदार रघुवीर सिंह की जागीर अगस्त, 1954 में फिर से शुरू कर दी गई थी, जो अक्तूबर, 1964 के उनके स्वयं के पत्र से परिलक्षित होती है, जिसमें उन्होंने स्वीकार किया था कि उनकी जागीर 1952 के अधिनियम के तहत 01.07.1954 को फिर से शुरू की गई थी और दावा किया था कि उस पर ब्याज का भुगतान किया गया था। जागीर बांड की देर से डिलीवरी उसके कारण है।

(झ) तथाकथित आदेश दिनांक 01.11.1954, जिस पर प्रत्यर्थी संख्या 1- रिट याचिकाकर्ता द्वारा भरोसा किया गया है, अत्यधिक संदिग्ध है क्योंकि जिस समय आदेश पारित किया गया था, उस समय एसडीओ का कोई न्यायालय मौजूद नहीं था। एसडीओ द्वारा पारित आदेश अस्पष्ट, प्रकृति में अस्पष्ट था और किरायेदार या खातेदार या भूमि के

मालिक के रूप में नाम दर्ज करने के संबंध में कोई स्पष्ट निर्देश नहीं दिया गया था।

(ञ) एसडीओ द्वारा की गई कार्यवाही का कोई रिकॉर्ड राज्य सरकार के पास उपलब्ध नहीं है। चूंकि बिसाऊ की जागीर को एसडीओ द्वारा आदेश पारित करने से काफी पहले ही बहाल कर दिया गया था, इसलिए एसडीओ द्वारा पारित दिनांक 01.11.1954 का आदेश अधिकार क्षेत्र के बिना था। यह आदेश 26 वर्षों से अधिक समय तक लागू नहीं हुआ, इसलिए, राज्य सरकार के पास एसडीओ के अमान्य आदेश को चुनौती देने का अवसर नहीं था। राजस्व अभिलेखों में प्रविष्टियों में सुधार के निर्देश 1952 के अधिनियम के तहत भूमि के पुनःग्रहण के बहुत बाद अपंजीकृत, अदिनांकित तथाकथित बिक्री विलेख के आधार पर जारी किए गए थे।

(ट) 1955 के अधिनियम के लागू होने के बाद, इसकी धारा 15 में निहित प्रावधानों के अनुसार, जागीर के तहत वे कृषक, जो भूमि पर कर खेती रहे थे और भू-राजस्व का भुगतान कर रहे थे, अकेलेदारी अधिकारों के हकदार थे। प्रत्यर्थी संख्या 1- रिट याचिकाकर्ता-ट्रस्ट या उसके पूर्ववर्तियों ने 1955 के अधिनियम के तहत विचाराधीन भूमि के खातेदार किरायेदारों के रूप में दर्ज होने के लिए कोई आवेदन नहीं किया क्योंकि उन्हें इसके तहत बनाई गई रोक के मद्देनजर चारागाह भूमि पर खातेदारी अधिकार प्रदान नहीं किए जा सकते थे। 1955 के अधिनियम की धारा 16, 1955 के अधिनियम की धारा 5(43) के तहत खातेदार/किरायेदार की परिभाषा के साथ पढ़ी गई। यहां तक कि तथाकथित विक्रय पत्र में भी दर्ज किया गया कि भूमि चारागाह भूमि थी और कहा गया था कि इसे केवल इस उद्देश्य के लिए दिया गया था।

(ठ) लगभग 26 वर्षों के बाद, 28.06.1980 को, सहायक बंदोबस्त अधिकारी ने, ग्रामीणों और बड़े पैमाने पर जनता से आपत्तियां आमंत्रित किए बिना, अवैध आधार पर भूमि को प्रत्यर्थी संख्या 1- रिट याचिकाकर्ता के नाम पर दर्ज कर दिया। एसडीओ द्वारा पारित आदेश दिनांक 01.11.1954. सहायक बंदोबस्त अधिकारी ने गलत तरीके से भूमि को सिवाई-चक बताया, जबकि वास्तव में यह भूमि सामान्य चरागाह भूमि के रूप में दर्ज थी। अतः सहायक बंदोबस्त पदाधिकारी का आदेश प्रारम्भ से ही शून्य था।

(ड) 12.09.1980 को, दिनांक 28.06.1980 के आदेश को अपास्त करने के लिए आवेदन निपटान अधिकारी, बीकानेर के समक्ष प्रस्तुत किया गया था, जिन्होंने मामले को आवश्यक आदेशों के लिए निपटान आयुक्त को भेज दिया था। निपटान आयुक्त ने 1956 के

अधिनियम की धारा 82 के तहत मामला दर्ज करने के बाद, तकनीकी आधार पर दिनांक 07.11.1983 के आदेश के तहत आवेदन को गलत तरीके से खारिज कर दिया कि ग्रामीणों को सहायक निपटान अधिकारी के आदेश के खिलाफ अपील या पुनरीक्षण याचिका दायर करनी चाहिए थी। फिर भी, निपटान आयुक्त ने आदेश को इस आशय से संशोधित किया कि भविष्य में भूमि का उपयोग केवल मवेशी चराने के लिए किया जाना चाहिए। आवेदन को अस्वीकार करना और निर्देश जारी करना निपटान आयुक्त के अधिकार क्षेत्र से बाहर था क्योंकि उन्हें राजस्व बोर्ड का संदर्भ देना आवश्यक था, जिसके पास अकेले ही मामले पर निर्णय लेने का अधिकार था। 1956 के अधिनियम की धारा 82 पर निपटान मिशनर या भूमि अभिलेख निदेशक या एक जिलाधीश को 1956 के अधिनियम की धारा 82 के तहत किसी भी आदेश को संशोधित करने या अपास्त करने का अधिकार नहीं है। राजस्व बोर्ड का संदर्भ देने के अलावा, कोई अन्य आदेश, पार्टियों के अधिकारों का निर्णय करने वाला आदेश पारित नहीं किया जा सकता।

(ढ) आदेश दिनांक 07.11.1983 के खिलाफ ग्रामीणों द्वारा दायर अपील में, राजस्व बोर्ड ने दिनांक 26.08.1988 के आदेश के तहत इसे इस आधार पर खारिज कर दिया कि संदर्भ देने के लिए राज्य सरकार को या तो अपील या आवेदन किया जाना चाहिए था और मामले की गुणवत्ता की जांच राजस्व बोर्ड द्वारा नहीं की गई, हालांकि राजस्व बोर्ड के पास 1956 के अधिनियम की धारा 84 के तहत क्षेत्राधिकार था। राजस्व बोर्ड द्वारा 17.07.1993 को पारित आदेश के मद्देनजर संदर्भ दिया गया था। राजस्व मंडल को संदर्भित करने के लिए तहसीलदार द्वारा दिए गए आवेदन पर अपर जिलाधीश। तहसीलदार ने दिनांक 28.06.1980 के आदेश को अपास्त करने और भूमि को गांव की शामलाती देह चारागाह के रूप में बहाल करने के लिए आवेदन किया।

(ण) राजस्व बोर्ड ने दिनांक 06.05.1998 के आदेश के तहत मामले के सभी पहलुओं को ध्यान में रखते हुए संदर्भ की अनुमति दी, विशेष रूप से यह कि विवादित भूमि सामान्य भूमि/चारागाह भूमि के रूप में दर्ज की गई थी और यहां तक कि तथाकथित बिक्री में भी विलेख में भूमि का उपयोग केवल चारागाह के लिए आरक्षित किया गया था। हालाँकि, आदेश दिनांक 06.05.1998 को वापस ले लिया गया क्योंकि यह एक पक्षीय आदेश था, राजस्व बोर्ड ने प्रभावित पक्षों को सुनवाई का अवसर देने के बाद मामले की फिर से जांच की और अंततः दिनांक 25.04.2003 के आदेश के तहत मौजूदा विचारों पर

संदर्भ की अनुमति दी।

(त) विद्वान एकलपीठ इस बात की सराहना करने में विफल रहे कि भले ही विवाद में जमीन सेठ पाली राम और बृज लाल द्वारा वर्ष 1942 में तथाकथित ठाकुर रघुवीर से खरीदी गई थी, जो केवल ठिकानेदार नहीं थे, प्रविष्टियों और राजस्व अभिलेखों में सुधार के लिए 12 वर्षों तक आवेदन किया गया था, जो स्पष्ट रूप से कथित पट्टे के अस्तित्व और वैधता पर संदेह की छाया डालता है।

(थ) विद्वान एकलपीठ ने यह भी उचित रूप से नहीं समझा कि प्रत्यर्थी संख्या 1- रिट याचिकाकर्ता एसडीओ द्वारा दिनांक 01.11.1954 को पारित कथित आदेश के बाद भी 30 वर्षों की अवधि तक अपने अधिकारों को लेकर सोता रहा, ताकि नाम दर्ज किया जा सके। राजस्व रिकार्ड विद्वान एकलपीठ ने भी इस बात की सराहना नहीं की कि उस बंदोबस्त अधिकारी को राजस्थान भू-राजस्व (सर्वेक्षण, रिकॉर्ड और निपटान) (सरकारी) नियम, 1957 के तहत राजस्व रिकॉर्ड में प्रविष्टियों को सही करने का अधिकार नहीं था। विद्वान एकलपीठ को इसकी सराहना करनी चाहिए थी कि सेठ पाली राम और बृज लाल को भूमि हस्तांतरित करने का अधिकार नहीं था और अन्यथा भी, कथित उपहार विलेख जिसके आधार पर प्रत्यर्थी संख्या 1- रिट याचिकाकर्ता-ट्रस्ट ने विवाद में भूमि पर स्वामित्व हासिल करने का दावा किया था, अपंजीकृत था, इसलिए, प्रत्यर्थी संख्या 1 के पक्ष में अधिकार नहीं बनाया गया।

(द) विद्वान एकलपीठ ने, बिना किसी आधार के, यह निष्कर्ष निकाला है कि ठाकुर रघुवीर सिंह बिसाऊ के ठिकानेदार थे, जबकि वह केवल एक जागीरदार थे, जिसे उन्होंने अपने पत्र दिनांक 07.10.1964 में स्वीकार किया है। इसलिए, उन्हें संबंधित भूमि बेचने का कोई अधिकार नहीं था। प्रत्यर्थी संख्या 1- रिट याचिकाकर्ता का मामला अपने मामले का समर्थन करने के लिए किसी भी दस्तावेजी सबूत पर आधारित नहीं था कि कथित पट्टा देने के समय, ठाकुर रघुवीर सिंह ठिकानेदार थे। बिसाऊ एक जागीर थी जैसा कि इस न्यायालय ने **हरजी राम और अन्य बनाम द्रोणाचार्य और अन्य (2005 एससीसी ऑनलाइन राज 105)** और **केदार मल विधिक प्रतिनिधि के माध्यम से बनाम राजस्व मंडल अजमेर एवं अन्य (2014 एससीसी ऑनलाइन राज 4059)** के मामले में दर्ज किया है। जागीरदार रघुवीर सिंह के उत्तराधिकारियों द्वारा दायर रिट याचिका में, जिसमें रघुवीर सिंह को बिसाऊ का पूर्व जागीरदार बताया गया है, और यह माना गया है कि बिसाऊ की

भूमि को अधिनियम के तहत पुनः प्राप्त किया गया था।

52. इसलिए, विद्वान एकलपीठ के निष्कर्ष कि बिसाऊ, बिसाऊ के ठिकानेदार द्वारा शासित था और एक शासक के समान था, रिकॉर्ड पर मौजूद सामग्री के विपरीत है और उस पहलू की विद्वान एकलपीठ द्वारा सही ढंग से जांच नहीं की गई थी। इसलिए, ठाकुर रघुवीर सिंह, केवल एक जागीरदार होने के नाते और शासक नहीं होने के कारण, उन्हें विवादित भूमि को बेचने का कोई अधिकार नहीं था, जो कि खेतड़ी राजस्व मैनुअल के प्रावधानों के साथ-साथ महामहिम महाराजा की सरकार के राजस्व विभाग की 1945 की राजपत्र अधिसूचना के भी खिलाफ था और परिणामस्वरूप, विलेख द्वारा तथाकथित बिक्री शून्य-अब-शुरूआत थी। **ठाकुर अमर सिंहजी और अन्य बनाम राजस्थान राज्य एवं अन्य, एआईआर 1955 एससी 504,** 1952 के मामले में अधिनियम की वैधता पर विचार करते समय, माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा आधिकारिक तौर पर यह माना गया था कि ठिकानेदारों की सही स्थिति यह थी कि उन्होंने इज़ारादार के रूप में संपत्तियों पर कब्ज़ा कर लिया था। जयपुर के शासक और महाराजा के अधीनस्थ प्रमुखों के रूप में पहचाने गए। उन्होंने जयपुर के शासक द्वारा दिए गए अनुदान के तहत ही संपत्तियों पर अपना स्वामित्व प्राप्त किया। इसलिए, प्रत्यर्थी संख्या 1- रिट याचिकाकर्ता का दावा अनिवार्य रूप से इस आधार पर आधारित है कि ठाकुर रघुवीर सिंह ठिकानेदार/शासक थे और जयपुर राज्य के अधीन जागीरदार नहीं थे।

(ध) **सेठ मनसुख राय मोरे बनाम राजस्थान राज्य, 1967 आरएलडब्ल्यू 478** के एक अन्य मामले में, यह माना गया है कि जागीरदार द्वारा शासक की पूर्व अनुमति के बिना कृषि भूमि भी नहीं बेची जा सकती है। यह प्रस्तुत किया गया है कि अपर जिलाधीश द्वारा राजस्व बोर्ड को दिया गया संदर्भ, जिसके कारण अंततः रिट याचिका में लगाए गए आदेश को पारित किया गया, कानून के अनुसार था क्योंकि निपटान आयुक्त द्वारा पारित आदेश अवैध था और कानून के अधिकार के बिना था। चूँकि 1956 के अधिनियम की धारा 82 निपटान आयुक्त या भूमि अभिलेख निदेशक या जिलाधीश को 1956 के अधिनियम की धारा 84 के तहत किसी को भी संशोधित करने या उलटने या अपास्त करने करने का अधिकार नहीं देती है। यह शक्ति केवल राजस्व के पास है।

(न) आगे तर्क दिया गया है कि 1956 के अधिनियम की धारा 82 के तहत संदर्भ आवेदन दाखिल करने के लिए कोई समय सीमा निर्धारित नहीं की गई है जैसा कि इस

न्यायालय ने **विद्याधर सुंडा बनाम राजस्थान राज्य एवं अन्य, 2020 (2) आरएलडब्ल्यू 1118 (राजस्थान)** के मामले में माना है।

(प) विद्वान एकलपीठ यह समझने में विफल रहे कि अपीलार्थियों ने स्पष्ट रूप से धोखाधड़ी का आरोप लगाया था और 1952 के अधिनियम की कठोरता से बचने के लिए लेनदेन पिछली तारीख में किए गए थे।

(फ) यह ऐसा मामला नहीं है जहां दिनांक 25.04.2003 को आदेश पारित करते समय राजस्व न्यायालय द्वारा स्वामित्व की जांच की गई हो। कथित पट्टे की जांच नहीं की गई है और केवल राजस्व भूमि पर दावा किए गए खातेदारी अधिकारों की जांच राजस्व बोर्ड द्वारा की गई है, जिसके लिए कानून के तहत उसका अधिकार क्षेत्र था।

8. इसके विपरीत, प्रतिवादी संख्या 1- रिट याचिकाकर्ता-ट्रस्ट के विद्वान अधिवक्ता ने निम्नलिखित प्रस्तुतियां दी हैं:

(क) विद्वान एकलपीठ द्वारा पारित आदेश में किसी भी हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है क्योंकि विद्वान एकलपीठ ने रिट याचिका की अनुमति दी, राजस्व बोर्ड द्वारा पारित आदेश को यह मानते हुए अपास्त कर दिया कि राजस्व बोर्ड ने इस पर विचार किए बिना दूसरे संदर्भ की अनुमति दी थी। प्रासंगिक आदेश और दस्तावेज़, विशेष रूप से विचार के लिए 1942 के वैध पट्टे से आने वाले कानूनी परिणाम, एसडीओ द्वारा पारित आदेश दिनांक 01.11.1954 और 1956 के अधिनियम की धारा 82 के तहत निपटान आयुक्त द्वारा पारित आदेश दिनांक 07.11.1983 पट्टा 1955 के अधिनियम के लागू होने से बहुत पहले 1942 में प्रदान किया गया था। निपटान आयुक्त, जो अपर जिलाधीश से उच्च प्राधिकारी है, ने उचित जांच करने और 1942 में दिए गए पट्टे और एसडीओ द्वारा पारित आदेश दिनांक 01.11.1954 का हवाला देते हुए दिनांक 1.1983 के आदेश द्वारा 1956 के अधिनियम की धारा 82 के तहत आवेदन खारिज कर दिया। निपटान आयुक्त की उपरोक्त के विरुद्ध अपील भी राजस्व बोर्ड द्वारा 26.08.1988 को खारिज कर दी गई। अपीलार्थी-राज्य ने किसी भी कार्यवाही में उन आदेशों का विरोध नहीं किया और इस प्रकार, आदेशों को अंतिम रूप दिया गया।

(ख) अपर जिलाधीश द्वारा बाद का संदर्भ कानून के तहत बिल्कुल भी सक्षम नहीं था क्योंकि अपर जिलाधीश निपटान आयुक्त के अधीनस्थ है। कानूनी स्थिति के अलावा कि

विवाद की उसी विषय वस्तु के संबंध में 1956 के अधिनियम की धारा 82 के तहत दूसरा संदर्भ कानून के तहत बनाए रखने योग्य नहीं था, दूसरा संदर्भ 50 वर्षों से अधिक की लंबी, अत्यधिक और अस्पष्ट देरी के बाद किया गया था। पट्टा की तारीख से; आदेश दिनांक 28.06.1980 से 12 वर्ष तथा प्रथम संदर्भ दिनांक 26.08.1988 को खारिज होने की तिथि से 5 वर्ष।

(ग) 1956 के अधिनियम की धारा 82 उसमें उल्लिखित तीनों प्राधिकरणों को एक के बाद एक बार-बार ऐसी शक्ति का प्रयोग या पुनः प्रयोग करने का अधिकार नहीं देती है। एक बार जब 1956 के अधिनियम की धारा 82 के तहत आवेदन को निपटान आयुक्त द्वारा तथ्यों के एक ही सेट के तहत खारिज कर दिया गया था, तो अपर जिलाधीश के लिए 1956 के अधिनियम की धारा 82 के तहत संदर्भ बनाने की शक्ति का पुनः प्रयोग करना सक्षम नहीं था। निपटान आयुक्त के समक्ष प्रस्तुत संदर्भ आवेदन और बाद में संदर्भ के लिए अपर जिलाधीश के समक्ष प्रस्तुत संदर्भ आवेदन के अवलोकन से पता चलेगा कि विवाद प्रकृति में अर्ध-न्यायिक था। एक बार जब निपटान आयुक्त ने प्रासंगिक तथ्यों और दस्तावेजों की जांच करने और दोनों पक्षों को सुनने के बाद अपने अर्ध न्यायिक कार्य में 07.11.1983 को आदेश पारित किया, तो इसकी अनुपस्थिति में स्वयं निपटान आयुक्त द्वारा भी इसकी पुनरीक्षण नहीं की जा सकती थी या इसे पूर्ववत नहीं किया जा सकता था। अधिनियम की धारा 82 के तहत या कानून के किसी भी अन्य प्रावधान के तहत उस पर या किसी अन्य प्राधिकारी द्वारा पुनरीक्षण की कोई शक्ति दी गई है। किसी भी मामले में, अपर जिलाधीश, जो 1956 के अधिनियम की धारा 24 के आधार पर निपटान आयुक्त के अधीनस्थ हैं, के पास निपटान आयुक्त द्वारा 07.11.1983 को पारित आदेश पर रोक लगाने की कोई क्षमता नहीं थी, खासकर जब अपील की गई हो उक्त आदेश के विरुद्ध राजस्व बोर्ड द्वारा 26.08.1988 को खारिज कर दिया गया था, जो बरकरार रहा और अंतिम रूप प्राप्त हुआ। **भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस (आई) बनाम समाज कल्याण एवं अन्य संस्थान (2002) 5 एससीसी 685; मध्य प्रदेश राज्य और अन्य बनाम बालकृष्ण नैथानी एवं अन्य, एआईआर 1967 एससी 394 और डॉ. (श्रीमती) कुंतेश गुप्ता बनाम हिंदू कन्या महाविद्यालय, सीतापुर (यूपी) और अन्य, (1987) 4 एससीसी 525** के मामलों में माननीय उच्चतम न्यायालय के निर्णयों पर भरोसा किया गया है।

(घ) भले ही यह मान लिया जाए, हालांकि स्वीकार नहीं किया गया है, कि शक्ति का प्रयोग अर्ध-न्यायिक नहीं था, बल्कि क़ानून के तहत प्रशासनिक था, फिर भी, एक बार शक्ति का प्रयोग हो जाने के बाद, यह समाप्त हो जाती है और शक्ति का प्रयोग करने वाला प्राधिकरण कार्यात्मक बन जाता है और उसके पास तथ्यों और परिस्थितियों के एक ही सेट पर शक्ति का पुन: प्रयोग करने का कोई क्षेत्राधिकार या अधिकार नहीं है। इस संबंध में **एयर इंडिया वैधानिक निगम और अन्य बनाम के मामलों में माननीय उच्चतम न्यायालय के निर्णयों यूनाइटेड लेबर यूनियन और अन्य, (1997) 9 एससीसी 377 और हिमाचल प्रदेश राज्य बनाम निशांत सरीन (2010) 14 एससीसी 527** पर भरोसा किया गया है। राजस्व बोर्ड ने अपने आदेश दिनांक 26.08.1988 के तहत अपर जिलाधीश को निपटान आयुक्त द्वारा पारित 07.11.1983 को पारित पहले के आदेश पर बैठने का अधिकार नहीं दिया। राज्य सरकार द्वारा या राज्य सरकार की ओर से कोई संदर्भ नहीं दिया गया। राजस्व मंडल में संदर्भ बनाने के लिए तहसीलदार द्वारा अपर जिलाधीश के न्यायालय में संदर्भ आवेदन दायर किया गया था जो कानून के तहत पोषणीय नहीं था।

(ङ) भले ही पर्यवेक्षी कार्रवाई के लिए कोई सीमा निर्धारित नहीं की गई है, फिर भी, शक्ति का प्रयोग उचित समय के भीतर किया जाना आवश्यक है। **गुजरात राज्य बनाम पाटिल राघव नाथा और अन्य (1969) 2 एससीसी 187** मामलों में माननीय उच्चतम न्यायालय के निर्णय और **आनंदी लाल बनाम राजस्थान राज्य एवं अन्य, 1996 (2) डब्ल्यूएलसी (राजस्थान)** के मामले में इस न्यायालय के निर्णय पर भरोसा रखा गया है। **36.** पट्टा देने के संबंध में या रिट कार्यवाही सहित किसी भी कार्यवाही में 01.11.1954 को एसडीओ द्वारा पारित आदेश के संबंध में धोखाधड़ी या मिलीभगत का कोई मामला न होने की स्थिति में, देरी घातक थी और इसलिए, संदर्भ राजस्व बोर्ड के समक्ष विचारणीय नहीं दिया गया था।

(च) हालांकि रिट याचिका के उत्तर में, रिट याचिका दायर करने में प्रत्यर्थी संख्या 1-रिट याचिकाकर्ता-ट्रस्ट के अधिकार क्षेत्र के संबंध में अपीलार्थियों द्वारा कोई विशेष आपत्ति नहीं उठाई गई थी, मौखिक तर्क इस आशय का उठाया गया था कि उपहार/बंदोबस्ती ट्रस्ट के पक्ष में निष्पादित उपहार को जब्त कर लिया गया था और उपहार विलेख को अपास्त करने की भी मांग की गई थी, जो कि प्रत्यर्थी संख्या 1 द्वारा दायर दिनांक 19.05.2007 और 12.05.2009 के आवेदनों से गलत है- रिट याचिकाकर्ता ने बंदोबस्ती विलेख और

आदेश को भी रिकॉर्ड में रखा है। दिनांक 29.10.1993 को जिलाधीश (स्टाम्प) द्वारा पारित किया गया था जिसके द्वारा यह निर्देशित किया गया था कि ट्रस्ट को पट्टा प्राप्त करने वालों के उत्तराधिकारियों द्वारा उक्त भूमि की बंदोबस्ती/उपहार पर यथामूल्य आधार पर स्टांप शुल्क का भुगतान किया जाना है और तदनुसार, बढ़ा हुआ स्टांप देना होगा। जिलाधीश (स्टाम्प) द्वारा निर्धारित शुल्क का भुगतान भी जुर्माने के साथ किया गया था।

(छ) पट्टा देने से संबंधित तथ्यों, परिस्थितियों और दस्तावेजों के बारे में अपर जिलाधीश या राजस्व बोर्ड द्वारा किए गए किसी भी संदर्भ के अभाव में, राजस्व बोर्ड और अपर जिलाधीश द्वारा पारित आदेश का बाद में बचाव नहीं किया जा सका। आधार और राजस्व बोर्ड और अपर जिलाधीश द्वारा विचार और निर्णय के आधार पर निर्णय लेने की आवश्यकता थी। **मोहिंदर सिंह गिल और अन्य बनाम मुख्य चुनाव आयुक्त, नई दिल्ली और अन्य एआईआर, 1978 एससी 851** के मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय के निर्णय पर भरोसा रखा गया। इसके अलावा, पट्टा/हस्तांतरण के साधन के पट्टा-विलेख या वैधता से संबंधित मुद्दे की जांच राजस्व अदालतों या प्रशासनिक अधिकारियों द्वारा नहीं की जा सकती है। इस संबंध में **गुजरात राज्य बनाम पाटिल राघव नाथ और अन्य (सुप्रा.); वेल्जी देवशी बनाम के माध्यम से कच्छी लाल रामेश्वर आश्रम ट्रस्ट एवं अन्न क्षेत्र ट्रस्ट जिलाधीश हरिद्वार और अन्य (2017) 16 एससीसी 418** के मामलों में माननीय उच्चतम न्यायालय के निर्णयों पर भरोसा किया गया है। यह आगे प्रस्तुत किया गया है कि 1956 के अधिनियम की धारा 259 के अनुसार, स्वामित्व के किसी भी प्रश्न से जुड़े विवाद का निर्णय केवल सिविल कोर्ट द्वारा किया जा सकता है।

(ज) रिट कोर्ट और रिट अपीलीय न्यायालय के समक्ष पहली बार संपार्श्विक रूप से किए गए पट्टे की वैधता को चुनौती देना कि खेतड़ी राजस्व नियमावली के पैरा 5 (क) के अनुसार उक्त दस्तावेज शुरू से ही शून्य था, कानून में गलत है क्योंकि प्रत्यर्थी संख्या 1 द्वारा रिकॉर्ड पर रखे गए खेतड़ी राजस्व मैनुअल से पता चलता है कि इसका भाग 5 (क) कोटपूतली परगना पर लागू होता है, न कि शेखावाटी क्षेत्र के परगना सहित किसी अन्य परगना पर जहां भूमि स्थित है। इसके अलावा, अपीलार्थी वर्ष 1942 में मौजूद और लागू किसी भी कानून को इंगित करने में विफल रहे हैं जो यह स्थापित करता हो कि बिसाऊ के शासक को पट्टा देने से प्रतिबंधित किया गया था। पट्टा 1945 के अधिनियम और 1947 के अधिनियम के लागू होने से बहुत पहले वर्ष 1942 में प्रदान किया गया था।

(झ) पट्टा वर्ष 1942 में प्रदान किया गया था, जो बिना किसी कार्यकाल या किराए के बल्कि वैध विचार के लिए अनुदान था और इसे किराए के लिए पट्टा अनुदान नहीं कहा जा सकता था। 1955 का अधिनियम वर्ष 1942 में पट्टा के बहुत बाद अधिनियमित किया गया था। इसलिए, पट्टा का अनुदान 1945 के अधिनियम की धारा 6 के तहत वर्गीकृत किरायेदारों की तीन श्रेणियों में से किसी में भी शामिल नहीं है।

(ञ) नए दस्तावेजी साक्ष्य पहली बार रिट न्यायालय के समक्ष और अपीलीय कार्यवाही में भी रखे गए हैं जो राजस्व बोर्ड के समक्ष नहीं रखे गए थे। राजपत्रित अधिसूचना दिनांक 08.06.1945 द्वारा अधिसूचित जयपुर के महामहिम महाराजा के सरकार के राजस्व विभाग के आदेश का संदर्भ पहली बार रिकॉर्ड पर रखा गया है। ऐसे किसी आधार के अभाव में, एसडीओ, सहायक बंदोबस्त अधिकारी, बंदोबस्त आयुक्त, अपर जिलाधीश, राजस्व बोर्ड और यहां तक कि रिट कोर्ट सहित किसी भी राजस्व प्राधिकारी के लिए इस पर विचार करने और चुनौती देने का कोई अवसर नहीं था। ऐसी नई सामग्री पर तत्कालीन ठिकानेदार ठाकुर रघुवीर सिंह का अधिकार खारिज किया जा सकता है क्योंकि राजस्व न्यायालय के पास 1942, के पट्टे के आधार पर स्वामित्व की जांच करने का अधिकार/अवसर नहीं था, तत्कालीन ठिकानेदार के अधिकार की कोई जांच नहीं की गई थी। वह ठिकानेदार था या जागीरदार, यह इन कार्यवाहियों में स्वीकार्य है।

(ट) नए दस्तावेज़ का संदर्भ, अर्थात ठाकुर रघुवीर सिंह का पत्र जिसमें कथित तौर पर 1952 के अधिनियम के तहत मुआवजे की मांग की गई है, अनिवार्य रूप से एक ऐसा मामला है जिसकी जांच केवल पट्टे के खिलाफ घोषणा की मांग करने वाले सिविल कोर्ट के समक्ष विधिवत कार्यवाही में की जा सकती है। 1952 के अधिनियम के तहत मुआवजे का दावा करने वाला तथाकथित पत्र, 1942 में नज़राना की प्राप्ति और पट्टा अनुदान के लंबे समय बाद, अप्रासंगिक है और 1942 के पट्टे के आधार पर अनुदान प्राप्तकर्ता के व्युत्पन्न पट्टा-विलेख पर प्रतिकूल प्रभाव नहीं डालता है जिसे सक्षम क्षेत्राधिकार वाले किसी भी न्यायालय द्वारा कानून में अमान्य या निष्क्रिय घोषित नहीं किया गया है। इसके अलावा, सुनवाई के समय यह तर्क उठाया गया कि पंजीकरण अधिनियम, 1908 के प्रावधान 1942 में पट्टा प्रदान करते समय लागू हो गए थे, जो किसी भी आधार पर आधारित नहीं है। अपीलार्थियों ने पंजीकरण अधिनियम, 1908 की तारीख को उस क्षेत्र तक बढ़ाए जाने की तारीख को रिकॉर्ड में नहीं रखा है जहां विवादित भूमि स्थित थी। यह

दिखाने के लिए रिकॉर्ड पर कोई सामग्री नहीं है कि पंजीकरण अधिनियम, 1908 उस क्षेत्र पर सार्वभौमिक रूप से लागू था जहां विवादित भूमि स्थित थी। **मैसर्स स्टोनवेयर पाइप और सेनेटरी फिटिंग मैन्युफैक्चरिंग कंपनी लिमिटेड, जयपुर बनाम राजस्थान राज्य और अन्य एआईआर 1972 राज 83** के मामले में इस न्यायालय के निर्णय में जयपुर पंजीकरण अधिनियम, 1944 का संदर्भ दिया गया था, जो 08.02.1944 को लागू हुआ, अर्थात 1942 में पट्टा देने के बाद।

(ठ) एसडीओ द्वारा पारित आदेश दिनांक 01.11.1954 को इस आधार पर विवादित करने के लिए कल्पनाशील तर्क उठाए गए हैं कि एसडीओ का न्यायालय अस्तित्व में नहीं था। राजस्व बोर्ड, बंदोबस्त आयुक्त, अपर समाहर्ता के समक्ष किसी भी कार्यवाही में ऐसी कोई दलील नहीं दी गई। **आनंदसिंह बनाम राजस्थान सरकार, 1951 आरएलडब्ल्यू 280 एवं सेठ गोकुलचंद बनाम राजस्थान सरकार, 1951 आरएलडब्ल्यू 429।** के मामलों में इस न्यायालय के निर्णयों में एसडीओ के कार्यालय का संदर्भ दिया गया है। इसलिए, एसडीओ के आदेश की वैधता को चुनौती बिना किसी आधार के इस न्यायालय को गुमराह करने के लिए झूठे आधार पर आधारित है।

(ड) उचित घोषणा की मांग करते हुए सक्षम क्षेत्राधिकार वाले सिविल न्यायालय के समक्ष मुकदमा दायर करके 1942 के पट्टे की वैधता को किसी भी चुनौती के अभाव में, 1942 के पट्टे की वैधता किसी भी कार्यवाही में जांच के दायरे से बाहर थी। राजस्व अदालतों के समक्ष और इसलिए, इस न्यायालय के समक्ष रिट कार्यवाही में, अपीलार्थी-राज्य के अनुरोध पर ऐसी कोई जांच की अनुमति नहीं है। 01.11.1954 को एसडीओ द्वारा पारित आदेश के आधार पर राजस्व प्रविष्टियों के सुधार में देरी और राजस्व रिकॉर्ड में गलत प्रविष्टियों की निरंतरता ने प्रत्यर्थी संख्या 1- रिट याचिकाकर्ता को उसके स्वामित्व से वास्तव में वंचित नहीं किया और विवाद में डाल दिया। राजस्व अभिलेखों में प्रविष्टियाँ न तो किसी स्वामित्व, अधिकार या हित का निर्माण करती हैं और न ही उसका उपयोग करती हैं। इसलिए, विद्वान एकलपीठ द्वारा पारित तर्कसंगत आदेश में किसी हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है।

9. हमने पक्षों के विद्वान अधिवक्ता द्वारा की गई व्यापक दलीलों पर गंभीरतापूर्वक विचार किया है और साथ ही मामले के रिकॉर्ड और चुनौती के तहत आदेश का भी अवलोकन किया है।

विदित हो कि इससे पहले आदेश दिनांक 04.07.2017 के तहत त्वरित अपील का निर्णय इस न्यायालय की को-ऑर्डिनेट खंडपीठ द्वारा किया गया था, जिसे 2021 की सिविल अपील संख्या 6776 (एसएलपी (सी) संख्या 18420/2021 2021 @ डी.नं. 9753/2019 से उत्पन्न) द्वारा दायर करके चुनौती दी गई थी। माननीय उच्चतम न्यायालय के समक्ष राज्य द्वारा अनुमत करते हुए, माननीय उच्चतम न्यायालय ने दिनांक 12.11.2021 के आदेश के माध्यम से, दिनांक 04.07.2017 के आदेश को अपास्त कर दिया और मामले को कानून के अनुसार और गुण-दोष के आधार पर अपील पर नए सिरे से निर्णय लेने के लिए वापस भेज दिया। माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा आगे यह देखा गया कि सभी विवाद, जो संबंधित पक्षों के लिए उपलब्ध हो सकते हैं, कानून के अनुसार और योग्यता के आधार पर खंडपीठ द्वारा विचार किए जाने के लिए खुले रखे गए हैं और माननीय उच्चतम न्यायालय मामले के गुण-दोषों में बिल्कुल भी विचार नहीं किया था, न ही किसी भी पक्ष के पक्ष में गुण-दोष के आधार पर कुछ भी व्यक्त किया था। माननीय उच्चतम न्यायालय ने आगे निर्देश दिया कि वर्तमान अपील के लंबित रहने के दौरान, उसके द्वारा पारित अंतरिम आदेश दिनांक 05.08.2019 जारी रहेगा।

10. यह अपील प्रत्यर्थी संख्या 1- रिट याचिकाकर्ता, पाली राम चैरिटेबल ट्रस्ट, सूरजगढ़ द्वारा राज्य के खिलाफ दायर भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 और 227 के तहत एक रिट याचिका में विद्वान एकलपीठ द्वारा पारित आदेश दिनांक 20.08.2009 से उत्पन्न हुई है। राजस्थान सरकार, एनयू बोर्ड द्वारा पारित आदेश दिनांक 25.04.2003 की वैधता पर प्रश्न उठा रही है। राजस्व बोर्ड ने दिनांक 25.04.2003 के आदेश के तहत, 1956 के अधिनियम की धारा 82 के तहत अपनी कार्रवाई और शक्ति का उपयोग करते हुए, राजस्व रिकॉर्ड से प्रत्यर्थी संख्या 1- रिट याचिकाकर्ता-ट्रस्ट, सेठ पाली राम और बृज लाल का नाम हटाने का निर्देश दिया। विवादित भूमि के संबंध में खातेदारों के रूप में और उसे चारागाह के लिए सामान्य सरकारी भूमि के रूप में दर्ज करने की संदर्भ कार्यवाही में राजस्व बोर्ड द्वारा पारित आदेश को प्रत्यर्थी संख्या 1- रिट याचिकाकर्ता द्वारा भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 और 227 के तहत रिट याचिका दायर करके चुनौती दी गई थी। रिट याचिका में, प्रत्यर्थी संख्या 1- रिट याचिकाकर्ता ने दलील दी कि ग्राम जाखोद, तहसील चिड़ावा, जिला झुंझुनू में स्थित 216 बीघा और 13 बिस्वा भूमि बिसाऊ के ठिकाना का हिस्सा थी और ठिकाना के तत्कालीन ठाकुर ने उसे पट्टा दे दिया था। सेठ पाली राम और

बृज लाल का नाम संवत् 1999 (सन् 1942 के अनुरूप) दिनांक असठबादी 1 संवत् 1999 (सन् 1942 के अनुरूप) के तहत रुपये 17,683 और 12 आना @ के प्रतिफल (नजराना) के लिए उनके आवेदन पर चराई के लिए 35 रुपये प्रति बीघे दिए गए क्योंकि वे चारागाह के लिए जमीन चाहते थे। प्रत्यर्थी संख्या 1- रिट याचिकाकर्ता-ट्रस्ट के अनुसार, स्वामित्व में इसके पूर्ववर्ती, सेठ पाली राम और बृज लाल ने भूमि पर कब्ज़ा प्राप्त कर लिया। हालाँकि, चूंकि राजस्व रिकॉर्ड में सुधार नहीं किए गए थे और सेठ पाली राम और बृज लाल, जिनके पक्ष में पट्टा दिया गया था, के नाम दर्ज नहीं किए गए थे, उन्होंने राजस्व रिकॉर्ड में अपने नाम के उत्परिवर्तन के लिए एसडीओ के समक्ष आवेदन किया। ऐसे आवेदन पर तत्कालीन संख्यादार का बयान दर्ज किया गया था, जिसने बताया था कि जमीन का उपयोग पशुओं और मवेशियों को चराने के लिए किया जा रहा है और उस पर सेठ पाली राम और बृज लाल का कब्जा है। 18.09.1954 को तहसीलदार, चिड़ावा ने भी अपनी रिपोर्ट दी कि भूमि का उपयोग पशुओं की चराई के लिए किया जा रहा है जबकि 16 बीघा भूमि का उपयोग खेती के लिए किया जा रहा है। भूमि अनुदान प्राप्तकर्ताओं के कब्जे में थी और इसलिए, तहसीलदार ने यह भी सिफारिश की थी कि भूमि को सेठ पाली राम और बृज लाल के नाम पर परिवर्तित किया जा सकता है। इस बीच, सेठ पाली राम और बृज लाल ने दिनांक 15.10.1954 के ट्रस्ट डीड के तहत पाली राम चैरिटेबल ट्रस्ट के नाम से एक धर्मार्थ ट्रस्ट का गठन किया। एसडीओ ने आदेश दिनांक 01.11.1954 द्वारा राजस्व अभिलेखों में सेठ पाली राम और बृज लाल के नामों में आवश्यक सुधार और उत्परिवर्तन का निर्देश दिया। परंतु, म्यूटेशन को लेकर न्यायिक कार्यवाही में एसडीओ द्वारा आदेश पारित किये जाने के बावजूद राजस्व अभिलेखों को दुरुस्त नहीं किया गया. इसलिए, आवेदन 16.06.1980 से 28.06.1980 की अवधि के बीच निपटान कार्यों के दौरान स्थानांतरित किया गया था, जिसके परिणामस्वरूप संबंधित सहायक निपटान अधिकारी द्वारा 28.06.1980 को एक आदेश पारित किया गया और इस तरह, रिकॉर्ड को अंततः उत्परिवर्तन के अनुसार सही किया गया। एसडीओ द्वारा आदेश दिनांक 01.11.1954 पारित किया गया। हालाँकि, ग्राम जाखोद के ग्रामीणों ने आपत्ति जताई और सहायक बंदोबस्त अधिकारी द्वारा पारित आदेश को अपास्त करने की मांग की, जिसके द्वारा सेठ पाली राम और बृज लाल के नाम विवादित भूमि के खातेदारों के रूप में दर्ज किए गए थे। निपटान आयुक्त ने पक्षों को सुनने के बाद दिनांक 07.11.1983 के आदेश से आवेदन

खारिज कर दिया। उक्त आदेश से व्यथित होकर, ग्राम पंचायत, जाखोद ने 1956 के अधिनियम की धारा 75 के तहत राजस्व बोर्ड में अपील दायर की। हालाँकि, राजस्व बोर्ड ने दिनांक 26.08.1988 के आदेश द्वारा अपील खारिज कर दी।

11. निपटान आयुक्त ने अपने आदेश दिनांक 07.11.1983 में दर्ज किया कि सेठ पाली राम और बृज लाल ने संवत 1999 (वर्ष 1942 के अनुरूप) में बिसाऊ के ठिकाना से विवादित भूमि खरीदी थी और उस आधार पर, एसडीओ ने एक प्रस्ताव पारित किया था। 01.11.1954 को आदेश दिया गया, जिस आदेश को कभी भी अपील या पुनरीक्षण में चुनौती नहीं दी गई। यदि कोई व्यथित था, तो कार्रवाई का तरीका अपील या संशोधन के माध्यम से ई एसडीओ द्वारा पारित आदेश दिनांक 01.11.1954 को चुनौती देना था, जो नहीं किया गया था, इसलिए, संदर्भ मांगने वाला आवेदन खारिज किया जा सकता था। इस तरह के विचार पर, संदर्भ मांगने वाले आवेदन को निपटान आयुक्त द्वारा खारिज कर दिया गया था। हालाँकि, निपटान आयुक्त ने आदेश में सेठ पाली राम और बृज लाल द्वारा अपनाए गए रुख का अवलोकन किया कि भूमि उन्हें चरागाह उद्देश्यों के लिए उपयोग करने की शर्त पर दी गई थी और रिपोर्ट से यह भी पता चलता है कि भूमि का उपयोग केवल चरागाह के लिए किया जा रहा था। चराई के प्रयोजनों के लिए, न कि किसी अन्य प्रयोजन के लिए और भूमि के धारकों ने वचन दिया है कि वे ग्रामीणों को चराई के प्रयोजनों के लिए भूमि का उपयोग करने की अनुमति देंगे।

12. राजस्व बोर्ड द्वारा अपील को खारिज करना इस विचार पर था कि यदि अपीलार्थी-ग्राम पंचायत सहायक निपटान अधिकारी द्वारा पारित आदेश दिनांक 28.06.1980 से व्यथित था, तो अपील या पुनरीक्षण दायर करना ही एकमात्र उपाय था। ऐसा नहीं किये जाने पर संदर्भ पोषणीय नहीं था। इसलिए, ऐसे निष्कर्ष को दर्ज करते हुए कि कोई संदर्भ नहीं दिया जा सका, निपटान आयुक्त के संदर्भ की मांग करने वाले आवेदन को खारिज करने के आदेश की पुष्टि की गई और अपील को राजस्व बोर्ड द्वारा खारिज कर दिया गया।

यह उल्लेखनीय है कि राजस्व बोर्ड द्वारा पारित आदेश दिनांक 26.08.1988, जिसने एसडीओ द्वारा पारित दिनांक 01.11.1954 के आदेश की वैधता और तथ्यता पर रोक लगा दी थी, को राज्य सरकार या ग्राम पंचायत या किसी अन्य द्वारा चुनौती नहीं दी गई।

13. इसके पांच वर्ष बाद, तहसीलदार, चिड़ावा ने अपर जिलाधीश, झुंझुनू के समक्ष एक आवेदन प्रस्तुत किया, जो कि 1956 के अधिनियम की धारा के तहत भूमि से संबंधित उसी

विवाद का संदर्भ मांग रहा था। अपर जिलाधीश ई-तहसीलदार ने उक्त आवेदन पर संज्ञान लेते हुए एकपक्षीय कार्यवाही की। उन्होंने दर्ज किया कि चूंकि भूमि संवत 1999 से संवत 2034 तक चारागाह के लिए सामान्य सरकारी भूमि के रूप में दर्ज रही, फिर भी सेठ पाली राम और बृज लाल के नाम अवैध रूप से खातेदार के रूप में दर्ज किए गए और सक्षम न्यायालय के आदेश के बिना, ऐसी प्रविष्टियां नहीं की जा सकीं। इसलिए, सहायक बंदोबस्त अधिकारी को राजस्व बोर्ड को संदर्भित किया गया था। इस पर, राजस्व मंडल ने शुरू में एक आदेश पारित किया जो प्रकृति में एकपक्षीय था, जिसमें संदर्भ स्वीकार किया गया और सेठ पाली राम और बृज लाल के नाम हटाकर भूमि रिकॉर्ड में सुधार करने का निर्देश दिया गया। हालाँकि, एक पक्षीय आदेश को अपास्त करने के लिए एक आवेदन किया गया था, संदर्भ पर पहला एक पक्षीय आदेश राजस्व बोर्ड द्वारा अलग रखा गया था। इसके बाद राज्य, सेठ पाली राम, बृज लाल और प्रत्यर्थी संख्या 1- रिट याचिकाकर्ता-ट्रस्ट, सभी को सुना गया। दिनांक 25.04.2003 के आदेश के तहत, राजस्व बोर्ड ने, 1956 के अधिनियम की धारा 82 के तहत अपनी शक्ति का प्रयोग करते हुए, यह माना कि चूंकि भूमि पूरी तरह से चारागाह के लिए सामान्य सरकारी भूमि के रूप में दर्ज की गई थी, धारा 16, उप-धारा (1) के तहत 1955 के अधिनियम के तहत कोई भी खातेदारी अधिकार प्रदान नहीं किया जा सकता था और इस कारण सहायक द्वारा पारित आदेश बंदोबस्त पदाधिकारी विधि विरुद्ध थे।

14. रिट याचिका में, राजस्व बोर्ड द्वारा पारित आदेश दिनांक 25.04.2003 को चुनौती देते हुए, इस आशय का विशिष्ट आधार लिया गया कि राजस्व बोर्ड इस तथ्य पर विचार करने में विफल रहा कि विचाराधीन भूमि सेठ पाली राम द्वारा खरीदी गई थी और वर्ष 1942 में ठिकाना बिसाऊ के ठाकुर से बृज लाल ने आवश्यक नजराना अदा करने के बाद प्रत्यर्थी संख्या 1- रिट याचिकाकर्ता-ट्रस्ट में स्थानांतरित कर दिया। इसलिए, 1955 के अधिनियम की धारा 16, उपधारा (1) के प्रावधान लागू नहीं थे। सेठ पाली राम और बृज लाल, 1942 के विलेख (पट्टा) के आधार पर मालिक बन गए। प्रत्यर्थी संख्या 1- रिट याचिकाकर्ता के अनुसार, सेठ पाली राम और बृज लाल के पक्ष में अधिकार, उचित कार्यवाही में किसी भी घोषणा के अभाव में कि यह चारागाह के लिए सामान्य सरकारी भूमि थी, सेठ पाली को वंचित करने के लिए 1955 के अधिनियम की धारा 16 का सहारा नहीं लिया जा सकता था। राम और बृज लाल ने विवादग्रस्त भूमि के खातेदार (मालिक) के रूप में अपना अधिकार वापस ले लिया। सेठ पाली राम, बृज लाल और प्रत्यर्थी संख्या

1- रिट याचिकाकर्ता 1955 के अधिनियम के लागू होने से पहले भी विवादग्रस्त भूमि पर काबिज रहे थे।

15. रिट याचिका में उठाया गया अन्य आधार संदर्भ कार्यवाही की स्थिरता, निपटान आयुक्त और राजस्व बोर्ड द्वारा पहले दर्ज किए गए निष्कर्षों के विपरीत निष्कर्षों को दर्ज करके संदर्भ बनाने के जिलाधीश/अपर जिलाधीश के अधिकार क्षेत्र के संबंध में था। प्रत्यर्थी संख्या 1- रिट याचिकाकर्ता के अनुसार, संदर्भ की मांग करने वाले पहले के आवेदन को निपटान आयुक्त ने खारिज कर दिया था, जिसकी पुष्टि राजस्व बोर्ड ने भी अपील में की थी, इसलिए, एकमात्र उपाय उन आदेशों को चुनौती देना था और संदर्भ मांगने के लिए कोई नई कार्यवाही नहीं थी। 1956 के अधिनियम की धारा 82 के तहत समान प्रावधान को लागू करते हुए अपर जिलाधीश द्वारा आवेदन नहीं किया जा सकता था, न ही राजस्व बोर्ड दूसरे संदर्भ की मांग करने वाले आवेदन पर विचार कर सकता था, खासकर तब जब संदर्भ मांगने वाले पहले के आवेदन को खारिज कर दिया गया था और राजस्व बोर्ड द्वारा उस आदेश की पुष्टि की गई थी। इस प्रकार, प्रत्यर्थी संख्या 1- रिट याचिकाकर्ता के अनुसार, यह मुद्दा कि क्या एसडीओ द्वारा 01.11.1954 को पारित पिछला आदेश, जो सही था या नहीं, अंतिम रूप ले चुका था, संदर्भ कार्यवाही के दूसरे दौर को कानून के तहत बनाए नहीं रखा जा सकता था और, इसलिए, संदर्भ बनाने के बाद के आदेश और 25.04.2003 को राजस्व बोर्ड द्वारा दूसरे संदर्भ को लेकर पारित आदेश को पुनर्न्याय के सिद्धांतों द्वारा रोक दिया गया था और इसे अपास्त किया जा सकता था। इसके अलावा अन्य आधार यह थे कि बंदोबस्ती कार्रवाई में कोई नया अधिकार सृजित या निर्णय नहीं लिया गया, बल्कि एसडीओ द्वारा 01.11.1954 को पारित आदेश के आधार पर ही राजस्व अभिलेखों में सुधार करने का निर्देश दिया गया था। राजस्व बोर्ड द्वारा पारित दिनांक 25.04.2003 के आदेश को अपास्त करने के लिए राहत की मांग के अलावा, दिनांक 01.11.1954 के आदेश के आधार पर प्रत्यर्थी संख्या 1- रिट याचिकाकर्ता-ट्रस्ट के नाम पर भूमि को दर्ज करने का निर्देश भी मांगा गया था। एसडीओ द्वारा पारित और निपटान आयुक्त द्वारा आदेश दिनांक 07.11.1983 पारित किया गया।

16. रिट याचिका के उत्तर में, अपीलार्थी-राज्य ने जानकारी के अभाव में इस बात से इनकार किया कि भूमि ठाकुर बिसाऊ, तहसील चिड़ावा के ठिकाना का हिस्सा थी। प्रत्यर्थी क्रमांक 1- रिट याचिकाकर्ता का दावा 1942 के पट्टे के आधार पर, बाद में तहसीलदार

और संख्यादार की रिपोर्ट के आधार पर एसडीओ द्वारा पारित आदेश दिनांक 01.11.1954 को भी 1952 के प्रावधानों के मद्देनजर खारिज कर दिया गया। दिनांक 18.09.1954 को तहसीलदार द्वारा की गई अनुशंसा को कानूनी और वैध दस्तावेज नहीं होने के कारण अस्वीकार कर दिया गया था। उत्तर में यह भी कहा गया कि एसडीओ द्वारा पारित आदेश दिनांक 01.11.1954 रिकॉर्ड पर उपलब्ध नहीं था और यह भी दावा करके संदेह करने की कोशिश की गई थी कि इसमें तत्कालीन एसडीओ के स्पष्ट हस्ताक्षर नहीं थे। राज्य के अनुसार, भूमि चारागाह के लिए सामान्य सरकारी भूमि के रूप में दर्ज की गई थी, जिसे जानवरों और मवेशियों के लिए सार्वजनिक भूमि के रूप में दर्ज किया गया था। सेठ पाली राम और बृज लाल का विलेख भी अस्वीकार कर दिया गया। भूमि की प्रकृति बदलने के बंदोबस्त विभाग के अधिकार क्षेत्र और नामांतरण के अधिकार पर भी प्रश्न उठाए गए। इस प्रकार, आदेश पारित करने वाले सहायक निपटान अधिकारी के अधिकार पर भी प्रश्न उठाया गया।

17. रिट कार्यवाही में विद्वान एकलपीठ के समक्ष उपरोक्त विवाद के मद्देनजर, विद्वान एकलपीठ ने दिनांक 8.2009 के आक्षेपित आदेश के माध्यम से बोर्ड ऑफ न्यू द्वारा पारित आदेश की तथ्यता की जांच की। चूंकि संदर्भ कार्यवाही की बहुत स्थिरता के संबंध में विशिष्ट आधार उठाया गया था, विद्वान एकलपीठ इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि एक बार राजस्व बोर्ड ने दिनांक 26.08.1988 के आदेश के तहत अपील को खारिज कर दिया था, न केवल दिनांक 07.11.1983 के आदेश में हस्तक्षेप करने से इनकार कर दिया था। निपटान आयुक्त द्वारा पारित किया गया, लेकिन संदर्भ मांगने वाले आवेदन को भी खारिज कर दिया गया, अपर जिलाधीश राजस्व बोर्ड का संदर्भ नहीं दे सकते थे, न ही राजस्व बोर्ड मामले का निर्णय करने के बाद मामले को फिर से खोल सकता था और एकमात्र उपाय चुनौती देना था वे आदेश यदि राज्य सरकार बिल्कुल भी व्यथित थी।

विद्वान एकलपीठ ने यह भी देखा कि कार्यवाही एक लंबी और अस्पष्ट देरी के बाद शुरू की गई थी। विद्वान एकलपीठ द्वारा यह नोट किया गया कि एसडीओ द्वारा पारित दिनांक 01.11.1954 का आदेश अंतिम रूप ले चुका है, दिनांक 16.06.1980 के आदेश के पारित होने की तारीख से लगभग 13 वर्षों के बाद संदर्भ कार्यवाही की आड़ में मामले को फिर से सहायक बंदोबस्त पदाधिकारी द्वारा खोलने की कोई गुंजाइश नहीं थी।.

18. विद्वान एकलपीठ का यह भी विचार था कि राज्य पहली बार यह नया तर्क नहीं

उठा सकता था कि भूमि की बिक्री पिछली तारीख में की गई थी। विद्वान एकलपीठ ने आगे कहा कि यदि राज्य की राय थी कि 1942 की मूल बिक्री धोखाधड़ी थी, तो वह बिक्री विलेख को चुनौती देने के लिए हमेशा स्वतंत्र था, लेकिन 1942 के बाद से, उसने कभी भी इसकी वास्तविकता को चुनौती नहीं दी और यहां तक कि रिट कार्यवाही में भी, केवल उत्तर में विक्रय पत्र पर विवाद किया जा रहा था, जो स्वीकार्य नहीं था। विद्वान एकलपीठ द्वारा यह भी नोट किया गया कि जब न्यायालय ने राज्य को मामले के पूरे रिकॉर्ड पेश करने का निर्देश दिया था, तो राज्य ने स्वीकार किया कि संबंधित रिकॉर्ड गायब हो गए हैं। इसलिए, विद्वान एकलपीठ का विचार है कि राज्य को रिकॉर्ड खोने में गलती का फायदा उठाने की अनुमति नहीं दी जा सकती है और इसे सेठ पाली राम, ठाकुर रघुवीर सिंह और प्रत्यर्थी संख्या 1 याचिकाकर्ता-ट्रस्ट की प्रामाणिकता पर पांच दशक बीत जाने के बाद दोष लगाने की अनुमति नहीं दी जा सकती है। विद्वान एकलपीठ ने एसडीओ द्वारा पारित आदेश दिनांक 01.11.1954 पर संदेह जताते हुए राज्य की उस दलील को भी खारिज कर दिया कि दिनांक 01.11.1954 का आदेश धोखाधड़ीपूर्ण है क्योंकि दिनांक 01.11.1954 के आदेश को राज्य द्वारा कभी चुनौती नहीं दी गई थी। दिनांक 01.11.1954 के आदेश को चुनौती देने के लिए राज्य द्वारा कोई कार्यवाही भी नहीं की गई थी और केवल रिट याचिका के उत्तर में, यह विवाद उठाया जा रहा था और जब रिकॉर्ड पेश करने के लिए कहा गया, तो राज्य ने बयान पर रिकॉर्ड पेश करने में असमर्थता व्यक्त की थी। रिकार्ड गायब हो गए थे। एसडीओ के कार्यालय के अस्तित्व को भी राज्य द्वारा चुनौती देने की मांग की गई थी, जिसे संख्यादार की दिनांक 27.08.1954 की रिपोर्ट और तहसीलदार की दिनांक 18.09.1954 की रिपोर्ट, जो तत्कालीन एसडीओ को संबोधित थी, को ध्यान में रखते हुए खारिज कर दिया गया था।

19. विद्वान एकलपीठ ने, 1956 के अधिनियम की धारा 3(i) में निहित प्रावधानों का जिक्र करते हुए, जो 'भूमि रिकॉर्ड अधिकारी' को परिभाषित करता है, 1956 के अधिनियम की धारा 125 के साथ पढ़ा, यह माना कि भूमि रिकॉर्ड अधिकारी को अधिकारों के रिकॉर्ड में प्रविष्टियों के संबंध में विवाद निपटान करने का अधिकार था। अतः सहायक बंदोबस्त पदाधिकारी द्वारा पारित आदेश दिनांक 28.06.1980 अधिकार क्षेत्र से रहित नहीं था। आदेश दिनांक 28.06.1980 न केवल सहायक भूमि बंदोबस्त अधिकारी द्वारा पारित किया गया था, बल्कि सहायक भूमि अभिलेख अधिकारी के रूप में संबंधित प्राधिकारी द्वारा भी

पारित किया गया था। यह आदेश एसडीओ द्वारा पारित आदेश दिनांक 01.11.1954 के आधार पर पारित किया गया। इसलिए, विद्वान एकलपीठ की राय में, कार्यवाही पूरी तरह से वैध और कानून के अनुसार थी। विद्वान एकलपीठ का विचार था कि एन विवाद के उपयोग की प्रकृति के बावजूद, 1942 के पट्टा द्वारा स्वामित्व का हस्तांतरण, इसके संलग्न होने और कानून में अवैध और निष्क्रिय घोषित किए जाने की अनुपस्थिति में, विवाद में भूमि को नहीं माना जाएगा। राजस्व बोर्ड द्वारा पारित आदेश की वैधता का निर्णय करते समय, जो अनिवार्य रूप से राजस्व रिकॉर्ड में उत्परिवर्तन के आदेश की तथ्यता और वैधता से संबंधित संदर्भ से उत्पन्न हुआ था, विद्वान एकलपीठ ने शासकों की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि पर भी प्रकाश डाला। हालाँकि, राजस्व बोर्ड के समक्ष राजस्व कार्यवाही में, या तो पहले दौर में या दूसरे दौर में, वह जांच के दायरे में नहीं था। विद्वान एकलपीठ ने माना कि ठाकुर रघुवीर सिंह अपने आप में ठिकानेदार (शासक) थे और जयपुर राज्य के महामहिम के अधीन होने के कारण जागीरदार या बिस्वेदार नहीं थे। ऐतिहासिक तथ्यों पर आधारित इस तरह के विचारों पर, विद्वान एकलपीठ ने एक निष्कर्ष दर्ज किया कि ठिकानेदार को, अपने राज्य का प्रमुख होने के नाते, अपने राज्य का हिस्सा जिसे वह पसंद हो, उसे बेचने का पूरा अधिकार और स्वतंत्रता थी और इस तरह एक शासक के रूप में अधिकार पर कोई प्रतिबंध या बंधन नहीं था। बिक्री को कानूनी और वैध माना गया था। उपरोक्त निष्कर्षों को आक्षेपित आदेश के पैरा 42 से 44 में विद्वान एकलपीठ द्वारा दर्ज किया गया क्योंकि राज्य ने रिट याचिका के उत्तर में ठिकानेदार की स्थिति से इनकार कर दिया था, जिसने 1942 में सेठ पाली राम और ब्रिज लाल को जमीन बेच दी थी।

20. इस अपील में, इस न्यायालय को मामले के गुण-दोष से उत्पन्न होने वाले मुद्दे पर निर्णय लेने के लिए कहा गया है कि क्या विद्वान एकलपीठ द्वारा राजस्व बोर्ड द्वारा पारित दिनांक 25.04.2003 के आदेश को अपास्त करना उचित था। राज्य की ओर से उपस्थित विद्वान अपर महाधिवक्ता ने विद्वान एकलपीठ द्वारा दर्ज किए गए उपरोक्त निष्कर्षों की आलोचना की। जैसा कि विद्वान एकलपीठ ने क्षेत्राधिकार और देरी दोनों के आधार पर संदर्भ कार्यवाही की स्थिरता का निर्णय लिया था, गुण-दोष पर विचार करने से पहले, हम संदर्भ की स्थिरता के संबंध में इस मुद्दे पर निष्कर्षों की तथ्यता वैधता की कार्यवाही जिसमें राजस्व मंडल द्वारा आदेश दिनांक 25.04.2003 पारित किया जाना है, जांच करने के इच्छुक हैं।

21. विद्वान राज्य अधिवक्ता के अनुसार, राजस्व बोर्ड में पहले दौर की कार्यवाही के बावजूद, जिसकी परिणति राजस्व बोर्ड द्वारा दिनांक 26.08.1988 को आदेश पारित करने के रूप में हुई, अपर जिलाधीश के लिए संदर्भ शुरू करने के लिए कानून के तहत कोई रोक नहीं थी। इस संबंध में दिए गए तर्कों को हम यहां ऊपर पहले ही नोट कर चुके हैं।

22. एसडीओ, चिड़ावा ने 01.11.1954 को एक आदेश पारित किया जो रिकॉर्ड में है। यह आदेश दो रिपोर्टों अर्थात् संख्यादार की रिपोर्ट और तहसीलदार की रिपोर्ट पर आधारित था। एसडीओ द्वारा पारित आदेश दिनांक 01.11.1954 के अवलोकन से पता चलता है कि एसडीओ ने उपरोक्त दो रिपोर्टों के आधार पर भूमि को सेठ पाली राम और बृज लाल के नाम पर दर्ज करने का निर्देश दिया था। जाहिर है, इसमें संख्यादार की रिपोर्ट दिनांक 27.08.1954 और तहसीलदार की दिनांक 18.09.1954 की रिपोर्ट का जिक्र था। इन दोनों रिपोर्टों से पता चला कि सेठ पाली राम और बृज लाल 12 वर्षों से विवादित भूमि पर कब्जा कर रहे थे। भूमि का उपयोग बिना किसी रुकावट के चारागाह के लिए किया जा रहा था, हालाँकि, ऊँटों और बकरियों को चराने की अनुमति नहीं थी। रिपोर्टों से यह भी पता चलता है कि 16 बीघे जमीन का इस्तेमाल निजी कृषि प्रयोजन के लिए किया जा रहा था और इस कब्जे पर किसी को कोई आपत्ति नहीं थी। तहसीलदार की रिपोर्ट से पता चला कि सेठ पाली राम और बृज लाल थाकना बिसाऊ द्वारा उनके पक्ष में निष्पादित पट्टे के आधार पर कब्जे में थे और भूमि का उपयोग पट्टे की शर्तों के अनुसार किया जा रहा था, न कि इसके विरुद्ध। उस आधार पर, यह अनुशंसा की गई कि संबंधित भूमि को सेठ पाली राम के नाम पर दर्ज किया जाए और हालांकि उन्हें पट्टा के नियमों और शर्तों का पालन करना आवश्यक हो सकता है। उपरोक्त दोनों रिपोर्टों के आधार पर ही एसडीओ द्वारा आदेश 01.11.1954 पारित किया गया था। उस आदेश को अपीलार्थी-राज्य सहित किसी ने भी चुनौती नहीं दी। हालाँकि, उसी समय, 01.11.1954 को उत्परिवर्तन के आदेश पारित होने के बावजूद राजस्व रिकॉर्ड में आवश्यक सुधार नहीं किए गए थे। बंदोबस्ती की कार्यवाही में ही सहायक बंदोबस्त पदाधिकारी ने 28.06.1980 को एक आदेश पारित कर एसडीओ द्वारा पारित आदेश दिनांक 01.11.1954 के आधार पर राजस्व अभिलेखों में सुधार करने का निर्देश दिया था। उस स्तर पर भी, अपीलार्थी-राज्य सहित किसी ने भी उस आदेश को चुनौती देने की मांग नहीं की। इस स्तर पर, हम ध्यान दे सकते हैं कि दिनांक 01.11.1954 का आदेश चुनौती रहित रहा।

23. हालांकि राज्य ने राजस्व रिकॉर्ड में की गई उपरोक्त प्रविष्टियों को चुनौती नहीं दी, लेकिन ग्राम जखोद के ग्रामीणों ने संदर्भ बनाने और पहले पारित आदेश को अपास्त करने के लिए सहायक निपटान अधिकारी के समक्ष 12.09.1980 को एक आवेदन प्रस्तुत किया। इसलिए, सहायक निपटान अधिकारी ने निपटान आयुक्त के संदर्भ के लिए आवेदन अग्रेषित कर दिया। निपटान आयुक्त ने दिनांक 07.11.1983 के आदेश के तहत माना कि अधिकारों के राजस्व रिकॉर्ड में सुधार एसडीओ द्वारा पारित दिनांक 01.11.1954 के आदेश पर आधारित था और यदि किसी को इस पर कोई आपत्ति थी, तो उपलब्ध उपाय अपील या पुनरीक्षण दायर करना था। इसलिए, कोई संदर्भ नहीं दिया जा सका। इस प्रकार, संदर्भ की मांग करने वाला आवेदन निपटान आयुक्त द्वारा खारिज कर दिया गया था।

24. अपील किए जाने पर, राजस्व मंडल ने दिनांक 26.08.1988 के आदेश के तहत अपील को खारिज कर दिया और दिनांक 07.11.1983 के आदेश को इसी आधार पर बरकरार रखा कि दिनांक 01.11.1954 द्वारा पारित आदेश को कोई चुनौती नहीं दी गई है। एसडीओ, कोई संदर्भ अप्राप्य नहीं था. राजस्व बोर्ड द्वारा पारित आदेश दिनांक 26.08.1988 को राज्य द्वारा किसी भी अन्य प्राधिकारी के समक्ष चुनौती नहीं दी गई। यहां तक कि राजस्व परिषद के समक्ष कोई पुनरीक्षण याचिका भी दायर नहीं की गई। उपरोक्त आदेश से उत्पन्न होने वाला एकमात्र कानूनी परिणाम यह था कि एसडीओ द्वारा पारित आदेश दिनांक 01.11.1954 की तथ्यता और वैधता के संबंध में विवाद, राजस्व रिकॉर्ड में सेठ पाली राम और बृज लाल के नाम को खातेदार के रूप में दर्ज करने के परिणामस्वरूप सुधार हुआ। राज्य के लिए राजस्व बोर्ड द्वारा पारित दिनांक 26.08.1988 के आदेश को उच्च न्यायालयों में चुनौती देना खुला था। उस आदेश को चुनौती न देने और आदेश के अंतिम रूप में आ जाने के बाद, राज्य या उसके किसी भी अधीनस्थ प्राधिकारी के लिए उन कार्यवाहियों की तथ्यता और वैधता पर प्रश्न उठाना संभव नहीं था, जिनकी परिणति राजस्व बोर्ड द्वारा पारित आदेश दिनांक 26.08.1988 में हुई।

25. हालाँकि, ऐसा प्रतीत होता है कि पाँच वर्ष बाद, अचानक, तहसीलदार चिड़ावा ने अपर जिलाधीश, झुंझुनू के समक्ष एक आवेदन प्रस्तुत किया, जिस पर अपर जिलाधीश, झुंझुनू द्वारा संज्ञान लिया गया और उन्होंने 17.07.1993 को एक आदेश पारित किया, जो रिकॉर्ड पर है। रिट याचिका. यदि हम उक्त आदेश की जांच करते हैं, तो हम पाते हैं कि यह और कुछ नहीं बल्कि पिछली कार्यवाही को फिर से खोलने का एक प्रयास था। उपरोक्त

आदेश की सामग्री भूमि के उसी पार्सल और सहायक बंदोबस्त अधिकारी द्वारा पारित आदेश दिनांक 28.06.1980 से संबंधित है। रिकॉर्ड पर इतना कुछ होने के बावजूद, पहले की कार्यवाही से बचने के लिए, जिसमें संदर्भ के लिए प्रार्थना खारिज कर दी गई थी और उक्त आदेश राजस्व बोर्ड तक पुष्टि कर दी गई थी, इस बार, अपर जिलाधीश ने इसका उल्लेख करने से पूरी तरह परहेज किया। 1942 का पट्टा और एसडीओ द्वारा पारित आदेश दिनांक 28.06.1980 के आदेश की सत्यता एवं वैधता की जांच हेतु अपर जिलाधीश को पूर्ण सूचना एवं जानकारी होने के बावजूद दिनांक 01.11.1954 जो अन्यथा अंतिम रूप ले चुका था। सहायक बंदोबस्त अधिकारी द्वारा 07.11.1983 को निपटान आयुक्त द्वारा खारिज कर दिया गया था जिसके खिलाफ अपील को भी राजस्व बोर्ड द्वारा खारिज कर दिया गया था, अपर जिलाधीश ने अपने अधिकार क्षेत्र और अधिकार से परे जाकर देखा कि पहले के आदेश और कार्यवाही अवैध थे। इस तरह के निष्कर्षों पर संदर्भ देना अपर जिलाधीश के अधिकार क्षेत्र और प्राधिकार में नहीं था क्योंकि यह न केवल निपटान आयुक्त द्वारा पारित दिनांक 07.11.1983 के आदेश के विरुद्ध होगा, बल्कि राजस्व बोर्ड द्वारा पारित दिनांक 26.08.1988 के आदेश के भी विरुद्ध होगा।

26. यह समझ से परे है कि अपर जिलाधीश, निपटान आयुक्त द्वारा पारित आदेश दिनांक 07.11.1983 और राजस्व बोर्ड द्वारा पारित आदेश दिनांक 26.08.1988 के तहत, संदर्भ कार्यवाही के माध्यम से मामले को फिर से कैसे खोल सकते हैं जब संदर्भ को पहले ही संधार्य नहीं माना गया था।

27. 1956 के अधिनियम की धारा 82 रिकॉर्ड और कार्यवाही और राज्य सरकार या बोर्ड को संदर्भित करने की शक्ति प्रदान करती है। उक्त प्रावधान वर्तमान मामले के प्रयोजन के लिए प्रासंगिक होने के कारण यहां नीचे दिया गया है:

> "**82. रिकॉर्ड और कार्यवाही और राज्य सरकार या बोर्ड को संदर्भित करने की शक्ति-** निपटान आयुक्त या भूमि रिकॉर्ड निदेशक या एक जिलाधीश किसी भी राजस्व न्यायालय या उसके अधीनस्थ अधिकारी द्वारा तय किए गए किसी भी मामले या कार्यवाही के रिकॉर्ड को मांग सकता है और उसकी जांच कर सकता है। उसे पारित आदेश की वैधता या औचित्य और कार्यवाही की नियमितता के बारे में खुद को संतुष्ट करने के उद्देश्य से; **और,** यदि उसकी राय है कि ऐसे अधीनस्थ न्यायालय या अधिकारी द्वारा की गई कार्यवाही या पारित आदेश को बदला जाना चाहिए, अपास्त किया जाना चाहिए या उलट दिया जाना चाहिए, तो वह उस पर अपनी राय के साथ मामले को **बोर्ड के** आदेशों के लिए संदर्भित करेगा, यदि मामला

> न्यायिक प्रकृति या निपटान से संबंधित किसी का है, या राज्य सरकार के आदेशों के लिए यदि मामला गैर-न्यायिक प्रकृति का है और निपटान से संबंधित नहीं है;
>
> **और बोर्ड** या राज्य सरकार, जैसा भी मामला हो, उसके बाद ऐसा आदेश पारित करेगी जैसा वह उचित समझे।"

28. उपरोक्त प्रावधान उस तारीख को अस्तित्व में था जब अपर जिलाधीश ने 17.07.1993 को निपटान आयुक्त या भूमि रिकॉर्ड निदेशक या जिलाधीश को किसी भी राजस्व न्यायालय या उसके अधीनस्थ अधिकारियों को पारित आदेश की वैधता या औचित्य और कार्यवाही की नियमितता के बारे में खुद को संतुष्ट करने के उद्देश्य से किसी भी निर्णय या कार्यवाही के रिकॉर्ड को मंगवाने और जांच करने का आदेश पारित किया।

हालाँकि, विधानमंडल ने, अपने विवेक से, उपरोक्त प्राधिकारियों को ऐसे आदेश को बदलने, अपास्त करने या उलटने की शक्ति प्रदान नहीं की है, लेकिन वह शक्ति राजस्व बोर्ड को प्रदान की गई है। यह आदेश पारित करने के बजाय राजस्व मंडल को संदर्भित करने की योजना में परिलक्षित होता है। इस प्रकार, उचित मामलों में निपटान आयुक्त या भूमि अभिलेख निदेशक या जिलाधीश द्वारा एक संदर्भ दिया जाना आवश्यक है। कम से कम तीन राजस्व प्राधिकरण हैं, जो राजस्व बोर्ड को संदर्भ देने की शक्ति का प्रयोग कर सकते हैं। संदर्भ देने की ऐसी शक्ति लेने वाले कोई अन्य राजस्व अधिकारी नहीं हैं। इसके अलावा, प्रावधान यह भी स्पष्ट करता है कि यदि मामला न्यायिक प्रकृति का है या निपटान से जुड़ा है, तो इसे राजस्व बोर्ड को आदेश के लिए भेजा जाएगा और यदि यह गैर-न्यायिक प्रकृति का मामला है और निपटान से जुड़ा नहीं है, तो इसे राजस्व बोर्ड को आदेश के लिए भेजा जाएगा। ऐसा संदर्भ दिए जाने पर, राजस्व बोर्ड या राज्य सरकार, जैसा भी मामला हो, ऐसा आदेश पारित कर सकता है जैसा वह उचित समझे।

एक बार उसी भूमि के संबंध में निपटान आयुक्त द्वारा संदर्भ की मांग करने वाले एक आवेदन की जांच की गई और इस आधार पर खारिज कर दिया गया कि अपील या पुनरीक्षण के माध्यम से दिनांक 01.11.1954 को पारित आदेश को चुनौती दिए बिना, कोई संदर्भ नहीं दिया जा सकता है। राजस्व, संदर्भ का एक और दौर, अर्थात, दूसरा संदर्भ या नया संदर्भ, 1956 के अधिनियम की धारा 82 की वैधानिक योजना के तहत पोस्ट नहीं किया गया है। अपर जिलाधीश को स्पष्ट रूप से इस कानूनी स्थिति के बारे में पता था, इसलिए, दिनांक 17.07.1993 के आदेश के तहत इसमें निपटान आयुक्त और राजस्व बोर्ड,

जिसके वह अधीनस्थ और बाध्य है, द्वारा पारित आदेशों का उल्लेख करने से आसानी से बचा गया।

29. के अधिनियम की धारा 24 राजस्व न्यायालयों और अधिकारियों की अधीनता से संबंधित है। इसकी उपधारा (5) इस प्रकार प्रदान करती है:

> "**24. राजस्व न्यायालयों एवं अधिकारियों की अधीनता-** धारा 9 एवं 23 के प्रावधानों के अधीन-
> (1)**XXXXXXX**
> (2)**XXXXXX**
> (3)**XXXXXXX**
> (4)**XXXXXXX**
> (5) सभी अपर बंदोबस्त आयुक्त, जिलाधीश, अपर जिलाधीश, बंदोबस्त अधिकारी, तहसीलदार, अपर तहसीलदार और नायब-तहसीलदार बंदोबस्त आयुक्त के अधीनस्थ होंगे;"

30. यह स्पष्ट रूप से स्पष्ट है कि जिलाधीश, अपर जिलाधीश निपटान आयुक्त के अधीनस्थ होंगे। इसलिए, एक बार जब संदर्भ मांगने वाला आवेदन निपटान आयुक्त द्वारा 07.11.1983 को खारिज कर दिया गया था, तो अपर जिलाधीश के पास संदर्भ कार्यवाही को फिर से शुरू करने के लिए 1956 के अधिनियम की धारा 82 की आड़ में कोई अधिकार क्षेत्र और अधिकार नहीं था। निपटान आयुक्त द्वारा 07.11.1983 को पारित आदेश, चाहे सही हो या गलत, पर बाध्यकारी था। अपर समाहर्ता सर्वकालिक इतना ही नहीं, बंदोबस्त आयुक्त द्वारा 07.11.1983 को पारित आदेश को 26.08.1988 को राजस्व मंडल द्वारा अनुमोदित किया गया। उसी जमीन के संबंध में अपर जिलाधीश के पास बोलने के लिए कुछ भी नहीं बचा था कि क्या सेठ पाली राम और बृज लाल के नाम को जमीन के खातेदारों के रूप में दर्ज किया जा सकता है।

31. हमें यहां यह जोड़ने में जल्दबाजी करनी चाहिए कि हम इस पर कोई टिप्पणी नहीं कर रहे हैं या यह तय नहीं कर रहे हैं कि एसडीओ द्वारा पारित 01.11.1954 का पिछला आदेश और सहायक निपटान अधिकारी, निपटान आयुक्त या राजस्व बोर्ड द्वारा पारित बाद के आदेश सही थे या नहीं। लेकिन एक बार जब कुछ कार्यवाही अंतिम रूप ले लेती है, तो पहले पारित आदेशों को चुनौती दिए बिना, यह निश्चित रूप से राजस्व अधिकारियों के लिए खुला नहीं था, अपर जिलाधीश के लिए तो बिल्कुल भी नहीं कि वह निपटान आयुक्त और राजस्व बोर्ड द्वारा पारित आदेशों को आसानी से टालकर पूरी कार्यवाही को फिर से खोल सके।

32. मामले के उपरोक्त पहलू को अपर जिलाधीश द्वारा किए गए संदर्भ पर राजस्व बोर्ड द्वारा बिल्कुल भी ध्यान में नहीं रखा गया था। राजस्व बोर्ड ने पहले अपील में निपटान आयुक्त द्वारा पारित आदेश दिनांक 07.11.1983 की पुष्टि की थी। राजस्व बोर्ड ने भी इस राय की पुष्टि की थी कि एसडीओ द्वारा पारित आदेश दिनांक 01.11.1954 और सहायक बंदोबस्त अधिकारी द्वारा पारित आदेश दिनांक 28.06.1980 को अपील या संशोधन के माध्यम से चुनौती दिए बिना, कोई संदर्भ नहीं दिया जा सकता है। एक ही संपत्ति से संबंधित एक ही विषय पर और पहले उठाए गए समान विवाद के संबंध में दूसरा संदर्भ शुरू करते समय, दूसरे संदर्भ पर राजस्व बोर्ड द्वारा बिल्कुल भी विचार नहीं किया जा सकता था। राजस्व बोर्ड द्वारा पारित आदेश दिनांक 25.04.2003 के अवलोकन से, यह स्पष्ट रूप से स्पष्ट है कि यह ऐसा मामला नहीं है जहां राजस्व बोर्ड ने 1956 के अधिनियम की धारा 86 के तहत पुनरीक्षण की अपनी शक्ति का प्रयोग किया है। राजस्व बोर्ड, हमें अत्यधिक आश्चर्य हुआ, इसने अपने स्वयं के आदेश दिनांक 26.08.1988 और निपटान आयुक्त द्वारा पारित आदेश दिनांक 07.11.1983 का उल्लेख करने से भी परहेज किया है। आदेश में केवल यह कहा गया है कि चूंकि भूमि राजस्व रिकॉर्ड में चारागाह के लिए सरकारी भूमि के रूप में दर्ज की गई थी, इसलिए सेठ पाली राम और बृज लाल का भूमि पर कोई अधिकार नहीं था और इसलिए, यह 1955 अधिनियम की धारा 16 (1) के प्रावधानों के विपरीत था। मामले की खूबियों के बावजूद, हमारा मानना है कि राजस्व बोर्ड, 1956 के अधिनियम की धारा 86 के तहत उपलब्ध पुनरीक्षण की अपनी शक्तियों का प्रयोग किए बिना और प्रावधानों को शामिल करता है। धारा 86 में निहित सीमा से संबंधित, 26.08.1988 को पहले पारित अपने स्वयं के आदेश को नजरअंदाज नहीं कर सकता था और 25.04.2003 को एक नया आदेश पारित कर सकता था। यदि इस तरह की कार्रवाई की अनुमति दी जाती है, तो राजस्व बोर्ड द्वारा पारित कोई भी आदेश अनिश्चित काल तक खुला रहेगा और उसके अधीनस्थ राजस्व अधिकारी राजस्व बोर्ड द्वारा पारित आदेशों की परवाह किए बिना एक के बाद एक संदर्भ देना जारी रख सकते हैं। ऐसी शक्ति न तो स्पष्ट रूप से प्रदान की गई है, न ही 1956 के अधिनियम की धारा 82 के तहत किसी भी प्रावधान के तहत प्रदान करने का इरादा है।

33. कानून के मामले में, अपर जिलाधीश द्वारा पारित संदर्भ दिनांक 17.07.1993 का आदेश क्षेत्राधिकार और कानून के अधिकार के बिना था, जिसे राजस्व बोर्ड द्वारा

25.04.2003 को आदेश पारित करने के लिए आधार बनाया गया था। यह उल्लेख करना प्रासंगिक है कि पहले संदर्भ की मांग करने वाला आवेदन निपटान आयुक्त के समक्ष प्रस्तुत किया गया था, जिन्होंने पक्षों को सुनने और प्रासंगिक सामग्री पर विचार करने के बाद, वर्ष 1942 में दिए गए पट्टे के संदर्भ में विस्तृत आदेश द्वारा संदर्भ आवेदन को खारिज कर दिया था, जिसे कब्जे में और एसडीओ द्वारा 01.11.1954 को पारित आदेश भी हस्तांतरित कर दिया गया था। अधिनियम 1956 की धारा 24, उपधारा (5) में निहित प्रावधानों के मद्देनजर, अपर जिलाधीश, बंदोबस्त आयुक्त के अधीनस्थ होने के नाते, उसी विषय वस्तु पर राजस्व बोर्ड के संदर्भ में पहल नहीं कर सकते थे जिस पर निपटान किया गया था। आयुक्त ने पहले राजस्व बोर्ड में आवेदन करने की प्रार्थना को खारिज कर दिया था। अपर जिलाधीश इस तथ्य और अपने अधिकार क्षेत्र की सीमाओं से पूरी तरह परिचित थे और इसलिए, उन्होंने निपटान आयुक्त द्वारा पारित दिनांक 07.11.1983 के आदेश का भी उल्लेख नहीं किया। अपर जिलाधीश द्वारा 17.07.1993 को पारित संदर्भ आदेश को यदि कायम रखा जाता है, तो यह निपटान आयुक्त द्वारा पारित दिनांक 07.11.1983 के आदेश से ऊपर बैठने के समान होगा। इतना ही नहीं, अपर जिलाधीश ने दिनांक 17.07.1993 के आदेश के तहत 26.08.1988 को राजस्व बोर्ड द्वारा पारित आदेश के ऊपर भी निर्णय सुनाया, जिसके द्वारा निपटान आयुक्त द्वारा पारित आदेश दिनांक 07.11.1983 के खिलाफ अपील खारिज कर दी गई थी। इसलिए, किसी भी कोण से देखा जाए, तो अपर जिलाधीश द्वारा दिया गया संदर्भ, जो राजस्व बोर्ड के लिए अधिनियम की धारा 82 के तहत अपनी शक्ति को लागू करने का आधार था, स्वयं क्षेत्राधिकार और कानून के अधिकार के बिना था।

34. यद्यपि प्रत्यर्थी संख्या 1 के विद्वान अधिवक्ता द्वारा इस दलील के समर्थन में बार में कई निर्णयों का हवाला दिया गया है कि पुनरीक्षण की स्पष्ट शक्ति के अभाव में, किसी भी पुनरीक्षण की अनुमति नहीं थी, हमारी चर्चाओं के मद्देनजर, हमारा विचार है 1956 के अधिनियम की धारा 86 में निहित प्रावधानों के मद्देनजर, राजस्व बोर्ड या अधिकारी या तो अपने स्वयं के प्रस्ताव पर या किसी भी इच्छुक पार्टी के आवेदन पर, स्वयं या किसी अन्य द्वारा पारित किसी भी आदेश की पुनरीक्षण कर सकता है। कार्यालय में अपने या अपने पूर्ववर्तियों के संदर्भ में ऐसे आदेश पारित करें जैसा कि वह धारा 86 की उप-धारा (2) के प्रावधान (i), (ii) और (iii) में निहित कुछ शर्तों के अधीन उचित समझे। हालाँकि, वर्तमान

मामले में, निपटान आयुक्त, जिन्होंने दिनांक 07.11.1983 को आदेश पारित किया था, भी अपने आदेश की पुनरीक्षण नहीं कर सके क्योंकि उक्त आदेश के खिलाफ अपील राजस्व बोर्ड द्वारा दिनांक 26.08.1988. के तहत खारिज कर दी गई थी।

पुनरीक्षण की शक्ति, यदि निपटान मिशनर के पास उपलब्ध है, किसी भी मामले में, अपर जिलाधीश द्वारा प्रयोग नहीं की जा सकती है।

इसके अलावा, भले ही राजस्व बोर्ड के पास 1956 के अधिनियम की धारा 86 के तहत पुनरीक्षण की शक्ति है, वर्तमान मामला, तथ्यों पर, पुनरीक्षण का मामला नहीं है, 26.08.1988 को पारित पहले के आदेश को वापस लेने, पुनरीक्षण करने, संशोधन करने या अपास्त करने की मांग करते हुए राजस्व बोर्ड के समक्ष कोई पुनरीक्षण आवेदन दायर नहीं किया गया था। वास्तव में, अपर जिलाधीश द्वारा उसी विषय वस्तु पर पूरी तरह से नई कार्यवाही फिर से शुरू की गई और मामले को 1956 के अधिनियम की धारा 82 के तहत प्रदान किए गए चैनल के माध्यम से राजस्व बोर्ड में लाया गया, जबकि अधिनियम की धारा 82 के तहत शक्ति 1956 का प्रयोग पहले ही राजस्व बोर्ड द्वारा किया जा चुका था। उन्हीं तथ्यों और परिस्थितियों पर, कानून के तहत राजस्व बोर्ड के लिए अपनी शक्ति का पुनः प्रयोग करना (जैसा कि पुनरीक्षण करने की शक्ति से अलग है) स्वीकार्य नहीं था।

गैर-न्यायिक शक्ति/प्रशासनिक शक्ति के प्रयोग के मामले में भी, माननीय उच्चतम न्यायालय ने **हिमाचल प्रदेश राज्य बनाम निशांत सरीन (सुप्रा.)** के मामले में को इस प्रकार अभिनिर्धारित किया गया:

> "**12.** यह सच है कि मंजूरी देने या देने से इनकार करने के मामले में सरकार वैधानिक शक्ति का प्रयोग करती है और इसका मतलब यह नहीं होगा कि एक बार प्रयोग की गई शक्ति का उपयोग किसी भी परिस्थिति में पुनरीक्षण की स्पष्ट शक्ति के अभाव में दोबारा या बाद के चरण में नहीं किया जा सकता है। हालाँकि, पुनरीक्षण की शक्ति बेलगाम या अप्रतिबंधित नहीं है। हमें यह पालन करने के लिए एक अच्छा सिद्धांत लगता है कि एक बार 1988 अधिनियम की धारा 19 या संहिता की धारा 197 के तहत वैधानिक शक्ति का प्रयोग सरकार या सक्षम प्राधिकारी, जैसा भी मामला हो, द्वारा कर लिया गया है, इसके लिए इसकी अनुमति नहीं है। उसी सामग्री पर मामले की दोबारा पुनरीक्षण या पुनर्विचार करने की मंजूरी देने वाला प्राधिकारी। ऐसा इसलिए है क्योंकि पुनरीक्षण की अप्रतिबंधित शक्ति इस तरह के अभ्यास को अंतिम रूप नहीं दे सकती है और सरकार के बदलने पर या मंजूरी की शक्ति का प्रयोग करने के लिए अधिकृत व्यक्ति के परिवर्तन पर, मंजूरी से संबंधित मामले को ऐसे प्राधिकारी द्वारा उन कारणों से फिर से खोला जा सकता है जो उसे सबसे अच्छी तरह से

ज्ञात हैं और एक अलग आदेश पारित किया जा सकता है. इस प्रकार, एक ही सामग्री पर राय बदलती रह सकती है और ऐसी वैधानिक प्रक्रिया का कोई अंत नहीं हो सकता है।

35. राज्य की ओर से उपस्थित विद्वान अपर महाधिवक्ता का प्रस्तुतीकरण कि निपटान आयुक्त द्वारा 07.11.1983 को पारित आदेश और उसके बाद 26.08.1988 को राजस्व बोर्ड द्वारा पारित आदेश संदर्भ देने में अपर जिलाधीश के रास्ते में नहीं आया, 17.07.1993 को और राजस्व बोर्ड द्वारा 25.04.2003 को ऐसे संदर्भ पर आदेश पारित करना, मान्य नहीं किया जा सकता क्योंकि अपील में पुष्टि की गई संदर्भ की मांग करने वाले आवेदन की अस्वीकृति के आदेश का प्रभाव उसी विषय वस्तु पर होगा, संदर्भ की कार्यवाही इसे दोबारा शुरू नहीं किया जा सकता था, न ही इसे राजस्व बोर्ड द्वारा 1956 के अधिनियम की धारा 82 के तहत शक्ति का प्रयोग करते हुए जांच के लिए लिया जा सकता था। निपटान आयुक्त ने दिनांक 07.11.1983 के आदेश के माध्यम से और राजस्व बोर्ड ने दिनांक 26.08.1988 के आदेश के माध्यम से लगातार माना कि कोई संदर्भ नहीं दिया जा सकता है और यदि किसी को दिनांक 28.06.1980 के आदेश के खिलाफ कोई शिकायत है, तो उपाय अपील या पुनरीक्षण दायर करना है। 26.08.1988 को राजस्व बोर्ड द्वारा पारित आदेश को राज्य या किसी भी मंच पर चुनौती नहीं दी गई, इसे अंतिम रूप दिया गया और इसलिए, यह किसी भी प्राधिकरण के लिए 1956 के अधिनियम की वैधानिक योजना के तहत स्वीकार्य नहीं था। राजस्व अदालतें या राजस्व अधिकारी मामले को फिर से देखें और संदर्भ कार्यवाही नए सिरे से शुरू करें क्योंकि यह पहले के आदेशों और कार्यवाही की अनदेखी करने जैसा होगा जिसकी कानून अनुमति नहीं देता है। यदि इस तरह की कार्रवाई की अनुमति दी जाती है, तो किसी भी कार्यवाही को अंतिम रूप नहीं दिया जा सकता है और यह एक अंतहीन प्रक्रिया होगी। एक बार जब मामला उच्चतम राजस्व न्यायालय, अर्थात राजस्व विभाग के समक्ष तय हो जाता है, तो उसके अधीनस्थ कोई भी राजस्व अधिकारी या तो अपने प्रस्ताव पर या किसी पक्ष द्वारा किए गए आवेदन पर निपटान के लिए फिर से विचार नहीं कर सकता है और इसका संदर्भ नहीं दे सकता है। राजस्व मंडल 1956 के अधिनियम की धारा 82 की योजना के तहत ऐसी शक्ति का अस्तित्व सार्वजनिक नीति के विरुद्ध होगा।

36. एक और कारण है कि संदर्भ की पूरी प्रक्रिया, जो राजस्व बोर्ड द्वारा दिनांक 25.04.2003 को आदेश पारित करने में परिणत हुई, को कानून के दायरे में खड़ा करने

की अनुमति नहीं दी जा सकती है। सहायक बंदोबस्त अधिकारी ने 16.06.1980 को आदेश पारित किया। निपटान आयुक्त द्वारा 07.11.1983 को और राजस्व बोर्ड द्वारा 26.08.1988 को पारित आदेशों के मद्देनजर, आदेश दिनांक 16.06.1980 को केवल अपील या संशोधन के माध्यम से चुनौती दी जा सकती है। हालाँकि, कोई अपील या संशोधन को प्राथमिकता नहीं दी गई। पांच वर्ष बाद, तहसीलदार ने संदर्भ के लिए एक आवेदन दायर किया। अपर जिलाधीश ने दिनांक 17.07.1993 को संदर्भ बनाते हुए आदेश पारित किया। इस प्रकार, 13 वर्षों के बाद, संदर्भ दिया गया और उसके बाद, 2003 में, राजस्व बोर्ड ने 1956 के अधिनियम की धारा 82 के तहत अपनी शक्ति का कथित प्रयोग करते हुए आदेश पारित किया। राजस्व बोर्ड द्वारा 25.04.2003 को विवादित आदेश पारित किया गया था, जबकि अपर जिलाधीश द्वारा 17.07.1993 को पारित संदर्भ आदेश में देरी को उचित ठहराने और समझाने के लिए कोई सामग्री नहीं थी। यह सच है कि संदर्भ देने के लिए कोई सीमा नहीं है, साथ ही, उचित अवधि के भीतर शक्ति का प्रयोग करना आवश्यक है। **गुजरात राज्य बनाम पाटिल राघव नाथ और अन्य (सुप्रा.),** के मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय ने इस प्रकार अभिनिर्धारित किया है:

> "**11.** प्रश्न यह उठता है कि क्या आयुक्त धारा 65 के तहत दिये गये आदेश को किसी भी समय संशोधित कर सकता है। यह सच है कि धारा 211 के तहत कोई सीमा अवधि निर्धारित नहीं है, लेकिन हमें यह स्पष्ट लगता है कि इस शक्ति का प्रयोग उचित समय में किया जाना चाहिए और उचित समय की अवधि मामले के तथ्यों और प्रकृति द्वारा निर्धारित की जानी चाहिए जिस आदेश को संशोधित किया जा रहा है।

37. **आनंदी लाल बनाम राजस्थान राज्य और अन्य (सुप्रा.),** के मामले में इस न्यायालय की खंडपीठ ने 1956 के अधिनियम की धारा 82 से निपटते समय, निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया गया:

> "17. इस मामले में यह निर्विवाद स्थिति है कि तहसीलदार ने 27 दिसंबर 1983 को अपर कलक्टर बारां को रिपोर्ट दी। इस रिपोर्ट के आधार पर अपर जिलाधीश ने राजस्व परिषद का हवाला दिया। इस प्रकार, 12 अक्तूबर, 1957 को अपीलार्थी/याचिकाकर्ता के पक्ष में पारित डिक्री और 22 सितंबर, 1958 को की गई म्यूटेशन प्रविष्टि संख्या 334 में धारा 82 के तहत शक्तियों का उपयोग करके 1956 के अधिनियम और 1955 के अधिनियम की धारा 232 के तहत, लगभग 25 वर्षों की अवधि के बाद हस्तक्षेप करने और अपास्त करने की मांग की गई है। 1955 के अधिनियम की धारा 232 और 1956 के अधिनियम की धारा 82 के प्रावधान इस प्रकार पढ़ें:

"232. **रिकॉर्ड मंगाने और बोर्ड को संदर्भित करने की शक्ति:** जिलाधीश वैधता के बारे में खुद को संतुष्ट करने के उद्देश्य से अपने अधीनस्थ किसी भी राजस्व न्यायालय द्वारा तय किए गए या उसके समक्ष लंबित किसी भी मामले या कार्यवाही के रिकॉर्ड को मांग सकता है और उसकी जांच कर सकता है। पारित आदेश या डिक्री की औचित्य और कार्यवाही की नियमितता के संबंध में, और यदि उसकी राय है कि पारित आदेश या डिक्री या ऐसी न्यायालय द्वारा की गई कार्यवाही को बदला जाना चाहिए, अपास्त किया जाना चाहिए या उलट दिया जाना चाहिए, तो वह मामले को अपने पास भेज देगा। बोर्ड के आदेशों के लिए उस पर राय और बोर्ड, उसके बाद, ऐसे आदेश पारित करेगा जो वह उचित समझे:

बशर्ते कि इस धारा द्वारा प्रदत्त शक्ति का प्रयोग धारा 239 के दायरे में आने वाले मुकदमों या कार्यवाही के संबंध में नहीं किया जाएगा।"

82. रिकॉर्ड और कार्यवाहियों को मंगाने और राज्य सरकार या बोर्ड को संदर्भित करने की शक्ति: निपटान आयुक्त या भूमि रिकॉर्ड निदेशक या एक जिलाधीश किसी भी राजस्व न्यायालय या अधीनस्थ अधिकारी द्वारा तय किए गए किसी भी मामले या कार्यवाही के रिकॉर्ड को मांग सकता है और उसकी जांच कर सकता है। उसे पारित आदेश की वैधता या औचित्य और कार्यवाही की नियमितता के बारे में खुद को संतुष्ट करने के उद्देश्य से, और, यदि उसकी राय है कि ऐसे अधीनस्थ न्यायालय या अधिकारी द्वारा की गई कार्यवाही या पारित आदेश में विविधता होनी चाहिए, अपास्त या उलट दिया गया है, तो वह उस पर अपनी राय के साथ मामले को बोर्ड के आदेशों के लिए संदर्भित करेगा, यदि मामला न्यायिक प्रकृति का है या निपटान से जुड़ा है, या यदि मामला गैर-न्यायिक है तो राज्य सरकार के आदेशों के लिए संदर्भित करेगा। प्रकृति निपटान से जुड़ी नहीं है और बोर्ड या राज्य सरकार, जैसा भी मामला हो, उसके बाद ऐसा आदेश पारित करेगी जैसा वह उचित समझे।"

उपरोक्त प्रावधानों को पढ़ने से पता चलता है कि राजस्व बोर्ड द्वारा पुनरीक्षण शक्ति के प्रयोग के लिए कोई सीमा अवधि निर्धारित नहीं है। हालाँकि, जब विधायिका द्वारा कोई सीमा अवधि निर्धारित नहीं की जाती है, तो क्या यह कहा जा सकता है कि अनुचित रूप से लंबी अवधि बीत जाने के बाद भी शक्ति का प्रयोग किसी भी समय किया जा सकता है?

18. इसी तरह का प्रश्न **गुजरात राज्य बनाम पटेल राघव नाथा एवं अन्य** ने AIR 1969 SC 1297 में प्रकाशित मामले में उच्चतम न्यायालय के समक्ष उठा। उस मामले में तथ्य इस प्रकार थे। 2 जुलाई 1960 को जिलाधीश ने भूमि के गैर-कृषि उपयोग की अनुमति दे दी। आयुक्त, राजकोट डिवीजन ने 12 अक्तूबर, 1961 के आदेश द्वारा पुनरीक्षण शक्तियों का प्रयोग करते हुए जिलाधीश द्वारा पारित आदेश को अपास्त कर दिया। बॉम्बे भूमि राजस्व संहिता की धारा 211 के तहत राज्य सरकार को प्रदत्त पुनरीक्षण शक्तियों का प्रयोग किया जा सकता है। प्रश्न यह उठा कि क्या

आयुक्त किसी भी समय इस शक्ति का प्रयोग कर सकता है, क्योंकि बॉम्बे लैंड रेवेन्यू कोड की धारा 211 के तहत कोई सीमा अवधि निर्धारित नहीं है? निर्णय के पैरा 11 में बॉम्बे लैंड रेवेन्यू कोड की धारा 211 के प्रावधानों पर विचार करने के बाद, उच्चतम न्यायालय ने इस प्रकार टिप्पणी की:

> "प्रश्न यह उठता है कि क्या आयुक्त किसी भी समय धारा 65 के तहत दिए गए आदेश को संशोधित कर सकता है। यह सच है कि धारा 211 के तहत कोई सीमा अवधि निर्धारित नहीं है, लेकिन हमें यह स्पष्ट लगता है कि इस शक्ति का प्रयोग उचित समय में किया जाना चाहिए और उचित समय की अवधि मामले के तथ्यों और संशोधित किए जा रहे आदेश की प्रकृति द्वारा निर्धारित की जानी चाहिए।"

इसके बाद निर्णय के पैरा 12 में, बॉम्बे लैंड रेवेन्यू कोड की धारा 65 और संहिता की धारा 211 के प्रावधानों पर विचार करने के बाद, उच्चतम न्यायालय ने आगे इस प्रकार कहा:

> "....धारा 211 और 65 के संबंध में हमें ऐसा लगता है कि आयुक्त को जिलाधीश के आदेश के कुछ महीनों के भीतर अपनी पुनरीक्षण शक्तियों का प्रयोग करना चाहिए, यह उचित समय है क्योंकि निर्माण प्रयोजनों के लिए अनुमति देने के बाद कब्जाधारी अनुमति की तारीख से कम से कम कुछ महीनों के भीतर भवन संचालन शुरू करने पर धन खर्च करने की संभावना है। इस मामले में आयुक्त ने 12 अक्तूबर, 1961 को जिलाधीश के आदेश को अपास्त कर दिया, अर्थात आदेश के एक वर्ष से अधिक समय बाद, और हमें ऐसा लगता है कि यह आदेश बहुत देर से पारित किया गया।

19. इस प्रकार उच्चतम न्यायालय ने माना है कि जब कोई सीमा निर्धारित नहीं की जाती है, तब भी संबंधित प्राधिकारी को प्रदत्त शक्ति का प्रयोग उचित समय के भीतर किया जा सकता है। उसके समक्ष मामले के तथ्यों में, उच्चतम न्यायालय ने माना कि गैर-कृषि उद्देश्यों के लिए भूमि के उपयोग की अनुमति के संबंध में बॉम्बे भूमि राजस्व संहिता की धारा 211 के तहत शक्तियों का प्रयोग तारीख से कुछ महीनों के भीतर किया जा सकता है। अनुमति का. उस मामले में, एक वर्ष से अधिक की अवधि के बाद शक्ति का प्रयोग किया गया था। उच्चतम न्यायालय ने माना कि सत्ता का प्रयोग बहुत देर से किया गया था।

20. उपरोक्त सिद्धांत को उच्चतम न्यायालय ने **मंसाराम बनाम एस.पी. पाठक और अन्य,** एआईआर 1983 एससी 1239 में प्रकाशित मामले में दोहराया है। उस मामले में रिपोर्ट किए गए निर्णय के पैरा 12 में, उच्चतम न्यायालय ने अन्य बातों के साथ-साथ इस प्रकार टिप्पणी की:

> "..... लेकिन जब शक्ति किसी उद्देश्य को पूरा करने के लिए प्रदान की जाती है, तो इसका उपयोग उचित तरीके से किया जाना चाहिए। उचित तरीके से शक्ति का प्रयोग उचित समय के भीतर इसके अभ्यास की अवधारणा को अंतर्निहित करता है। निस्संदेह, कोई सीमा नहीं है इस संबंध में निर्धारित किया गया है, लेकिन कोई भी इस बात से आश्चर्यचकित होगा कि एक मकान मालिक कुछ हद तक परिशिष्ट में

उस व्यक्ति के खिलाफ स्थिति बदल सकता है जो किरायेदार के रूप में 22 वर्षों से कब्जे में था।

उच्चतम न्यायालय ने पटेल राघव नाथ (सुप्रा.) के मामले का उल्लेख किया है और उसी सिद्धांत को दोहराया है।

21. जैसा कि ऊपर बताया गया है, कानून की स्थापित स्थिति को ध्यान में रखते हुए, केवल इसलिए कि 1956 के अधिनियम की धारा 82 और 1955 के अधिनियम की धारा 232 के प्रावधान सीमा की अवधि के लिए प्रदान नहीं करते हैं, इसका मतलब यह नहीं है कि जिस प्राधिकारी को शक्ति प्रदान की गई है, वह किसी भी समय उसका प्रयोग कर सकता है। ऐसा इसलिए है क्योंकि प्रत्येक प्राधिकारी, जिसे शक्ति प्रदान की गई है, से यह अपेक्षा की जाती है कि वह इसका उचित और उचित तरीके से प्रयोग करेगा। उचित तरीके से शक्ति के प्रयोग की अवधारणा के साथ उचित समय के भीतर इसका प्रयोग करने की अवधारणा भी निहित है। यदि उचित समय के भीतर शक्ति का प्रयोग नहीं किया जाता है, तो अत्यधिक देरी के बाद शक्ति का प्रयोग और अनुचित समय के बाद इसका प्रयोग अन्यायपूर्ण, मनमाना और अनुचित होगा। इसलिए, ऐसी शक्ति का प्रयोग करके की गई कार्रवाई अवैध और शून्य होगी। यदि उचित समय के भीतर शक्ति के प्रयोग की आवश्यकता को 1956 के अधिनियम की धारा 82 और 1955 के अधिनियम की धारा 232 के प्रावधानों में नहीं पढ़ा जाता है, तो प्रावधान स्वयं असंवैधानिक हो जाएगा। यह कभी नहीं माना जा सकता कि विधायिका का इरादा किसी प्राधिकारी को अन्यायपूर्ण और अनुचित तरीके से प्रयोग करने की शक्ति प्रदान करना था। इसलिए, उपरोक्त प्रावधानों की संवैधानिकता को बनाए रखने के लिए, उचित अवधि के भीतर उसी शक्ति के प्रयोग की आवश्यकता को पढ़ा जाना चाहिए।

22. एआईआर 1989 एससी 1771 में प्रकाशित **भारत सरकार बनाम द सिटाडेल फाइन फार्मास्यूटिकल्स, मद्रास और अन्य** के मामले में, औषधीय और शौचालय तैयारी (उत्पाद शुल्क) नियम 1956 के नियम 12 की संवैधानिक वैधता पर प्रश्न उठा। उक्त नियम सरकार को देय राशि की वसूली की अवशिष्ट शक्तियों का प्रावधान करता है। चूंकि कोई सीमा अवधि निर्धारित नहीं की गई थी, इसलिए यह तर्क दिया गया कि नियम 12 का प्रावधान अनुचित था और संविधान के अनुच्छेद 14 का उल्लंघन था। उच्चतम न्यायालय ने इस दलील को खारिज कर दिया. फिर रिपोर्ट किए गए निर्णय के पैरा 6 में, उच्चतम न्यायालय ने इस प्रकार टिप्पणी की:

> "....हालांकि यह सच है कि नियम 12 कोई अवधि निर्धारित नहीं करता है जिसके भीतर नियमों के अनुसार किसी भी शुल्क की वसूली की जानी है, लेकिन यह नियम को अनुचित या अनुच्छेद 14 का उल्लंघन नहीं करता है। किसी भी सीमा अवधि के अभाव में यह तय किया गया है कि प्रत्येक प्राधिकारी को उचित अवधि के भीतर शक्ति का प्रयोग करना है। उचित अवधि क्या होगी यह प्रत्येक मामले के तथ्यों पर निर्भर करेगा।"

23. यह तर्क कि भूमि मुआफ़ी मूर्ति मंदिर की भूमि थी, इसलिए, किसी भी समय के बाद शक्ति का प्रयोग किया जा सकता था, स्वीकार नहीं किया जा सकता। प्रश्न भूमि की प्रकृति के संबंध में नहीं है। जिस प्रश्न की जांच की जानी आवश्यक है वह यह है कि क्या 1956 के अधिनियम की धारा 82 के प्रावधानों और 1955 के अधिनियम की धारा 232 के प्रावधानों के तहत संबंधित प्राधिकारी को प्रदत्त पुनरीक्षण शक्ति का प्रयोग अनुचित समय अवधि के बाद किया जा सकता है। जैसा कि उच्चतम न्यायालय ने पूर्वोक्त निर्णयों में कहा था, जब भी क़ानून परिसीमा अवधि के लिए प्रावधान नहीं करता है, तो शक्ति का प्रयोग उचित समय के भीतर किया जा सकता है। उचित अवधि क्या होगी, यह मामले के तथ्यों और संशोधित किए जाने वाले आदेश की प्रकृति पर निर्भर करेगा।

24. हमारी राय में, जैसा कि ऊपर कहा गया है, निर्धारित कानूनी स्थिति किरायेदारों/खातेदारों के कब्जे वाली कृषि भूमि पर भी लागू होगी, जब ऐसे किरायेदारों/खातेदारों के मामले तय हो जाएंगे और उनके अधिकारों का निष्कर्ष निकाला जाएगा और उसी के अनुसार वे जमीन पर कब्ज़ा है। आमतौर पर 1956 के अधिनियम की धारा 82 और 1955 के अधिनियम की धारा 232 के तहत पुनरीक्षण शक्ति का प्रयोग संशोधित किए जाने वाले आदेश की तारीख से एक वर्ष की अवधि के बाद नहीं किया जा सकता है। एक बार जब कोई किरायेदार/खातेदार किरायेदारी/खातेदारी अधिकार प्राप्त कर लेता है और भूमि पर उसका कब्जा बना रहता है, तो अनुचित देरी के बाद उसके अधिकारों पर प्रश्न नहीं उठाया जा सकता है। ऐसे किरायेदारों/खातेदारों के साथ सभी उद्देश्यों के लिए, अन्य सभी किरायेदारों/खातेदारों के समान व्यवहार किया जाना आवश्यक है, जिन्होंने भूमि पर किरायेदारी/खातेदारी अधिकार हासिल कर लिया है। 1956 के अधिनियम की धारा 82 के तहत और/या 1955 के अधिनियम की धारा 232 के तहत अनुचित देरी के बाद पुनरीक्षण शक्तियों के प्रयोग की अनुमति देना, शक्ति के अनुचित और मनमाने प्रयोग पर अदालतों की अपरिपक्वता लगाने के समान होगा। एक वर्ष की अवधि के भीतर भूमि के किरायेदार/खातेदार ने भूमि के सुधार के लिए धन खर्च किया होगा, उसने अपने जीवन के मामलों को इस आधार पर व्यवस्थित किया होगा कि भूमि पर उसका कब्ज़ा है, उसने इस आधार पर लेन-देन किया और कई प्रतिबद्धताएं कीं। इसलिए, आमतौर पर 1956 के अधिनियम की धारा 82 और 1955 के अधिनियम की धारा 232 के तहत पुनरीक्षण शक्तियों का प्रयोग एक वर्ष की अवधि के बाद नहीं किया जा सकता है। यदि उचित समयावधि की इस आवश्यकता को उपरोक्त प्रावधानों में नहीं पढ़ा जाता है, तो प्रावधान असंवैधानिक हो जाएंगे।

38. विद्वान अपर महाधिवक्ता ने **विद्याधर सुंडा बनाम राजस्थान राज्य एवं अन्य (सुप्रा.)** के मामले में निर्णय पर भरोसा किया है। उपरोक्त निर्णय के अवलोकन से पता चलता है कि यह न्यायालय एक ऐसे मामले से निपट रहा था जहां धोखाधड़ी के गंभीर आरोप थे। उस मामले में, यह आरोप लगाया गया था कि यद्यपि विवाद में संपत्ति कभी भी दूसरे पक्ष

को नहीं बेची गई थी, दूसरे पक्ष ने निपटान कार्यवाही के दौरान जमाबंदी में गलत प्रविष्टि की आड़ में पीड़ित पक्ष को बेदखल करने का प्रयास किया। यह मानते हुए कि किसी भी सीमा अवधि के निर्धारण की अनुपस्थिति प्राधिकरण को अपनी इच्छानुसार प्रयोग करने की बेलगाम शक्ति प्रदान नहीं करती है, यह माना गया कि ऐसी शक्ति का प्रयोग उचित समय के भीतर किया जाना चाहिए। असाधारण प्रकृति के मामले को उजागर करते हुए कहा गया कि धोखाधड़ी, मिलीभगत, अधिकार क्षेत्र की कमी के मामले में और ऐसी परिस्थितियों में जहां आदेश सार्वजनिक हित और नीति के खिलाफ होने के कारण शून्य हैं, यह माना गया कि शक्ति का प्रयोग किसी भी समय किया जा सकता है।

उस विशेष मामले के विशिष्ट तथ्यों और परिस्थितियों पर लागू ऐसे सिद्धांतों पर विचार करने पर, 1956 के अधिनियम की धारा 82 के तहत शक्ति का प्रयोग 19 वर्षों की लंबी अवधि के बाद किया गया था। हालाँकि, वर्तमान मामले में ऐसी स्थिति मौजूद नहीं है। अपर जिलाधीश द्वारा 17.07.1993 को पारित आदेश और राजस्व मंडल द्वारा 25.04.2003 को पारित आदेश में सेठ पाली राम, बृज लाल या प्रत्यर्थी संख्या 1 रिट याचिकाकर्ता-ट्रस्ट द्वारा की गई किसी भी धोखाधड़ी के बारे में नहीं है। उनका मामला 1942 के पट्टे के आधार पर कानूनी स्थिति की प्रामाणिकता पर आधारित है। हालांकि राज्य द्वारा पट्टा-विलेख, अर्थात 1942 के पट्टे पर संदेह पैदा करने और यहां तक कि इसकी वैधता पर संदेह पैदा करने का एक निरर्थक प्रयास किया गया है। उक्त दस्तावेज़ में, यह दिखाने के लिए राज्य द्वारा रिकॉर्ड पर कोई सामग्री नहीं रखी गई है कि पट्टा धारकों द्वारा कोई धोखाधड़ी की गई थी, जिसके कारण सहायक निपटान अधिकारी द्वारा दिनांक 28.06.1980 को आदेश पारित किया गया था, जिसने सिवाई-चक की प्रविष्टि को अपास्त करने का निर्देश दिया था (सरकारी भूमि) और 1942 के पट्टे के तहत हस्तांतरितियों के नाम खातेदारों के रूप में दर्ज करने का निर्देश दिया। वह आदेश इस आधार पर पारित किया गया था कि एसडीओ ने पहले ही 01.11.1954 को स्थानांतरित सेठ पाली राम और बृज लाल के पक्ष में उत्परिवर्तन का आदेश पारित कर दिया था, फिर भी रिकॉर्ड सही नहीं किए गए थे। इसका आधार एसडीओ द्वारा पारित दिनांक 01.11.1954 का आदेश था, जिसे 28.06.1980 को आदेश पारित होने तक 26 वर्षों तक राज्य सहित किसी ने भी चुनौती नहीं दी थी। इसलिए, दिनांक 17.07.1993 के आदेश द्वारा जिसे अपास्त करने की मांग की गई थी, वह 39 वर्ष पहले पारित उत्परिवर्तन आदेश था जिसमें राजस्व रिकॉर्ड में सुधार का

निर्देश दिया गया था।

39. अपर जिलाधीश द्वारा शुरू की गई संदर्भ की कार्यवाही का दायरा, जो राजस्व बोर्ड द्वारा पारित आदेश दिनांक 25.04.2003 में समाप्त हुआ, सीमित पहलू तक सीमित था कि क्या सेठ पाली राम, बृज लाल और उसके बाद प्रत्यर्थी संख्या 1- रिट याचिकाकर्ता-ट्रस्ट को विवादग्रस्त भूमि के खातेदार के के नाम में दर्ज किया जा सकता है। यह न तो जांच का हिस्सा था, न ही यह राजस्व अधिकारियों के अधिकार क्षेत्र में था, यहां तक कि राजस्व बोर्ड तक के स्वामित्व के मुद्दे को तय करने का अधिकार सेठ पाली राम और बृज लाल द्वारा दावा किया गया था और उसके बाद, प्रत्यर्थी संख्या 1- रिट याचिकाकर्ता द्वारा 1942 के पट्टे के आधार पर भरोसा किया गया था। इसलिए, जब इस मामले को इस न्यायालय के समक्ष भारत के अनुच्छेद 226 और 227 के तहत रिट याचिका दायर करके लाया गया था, तो विचार को अनिवार्य रूप से केवल दायरे और दायरे तक ही सीमित रखना आवश्यक था। कार्यवाही पर जांच और उससे आगे नहीं। अपर जिलाधीश द्वारा 17.07.1993 को पारित आदेश और राजस्व मंडल द्वारा 25.04.2003 को पारित आदेश में 1942 के पट्टे के अस्तित्व और वैधता तो दूर, स्वामित्व के मुद्दे को भी नहीं छुआ गया है। न तो इसे उठाया गया था, न ही राजस्व बोर्ड के पास यह निर्णय लेने का कोई अवसर था कि ठाकुर रघुवीर सिंह ठिकानेदार/शासक थे या केवल जागीरदार/बिस्वेदार थे। राजस्व बोर्ड के पास 1942 के पट्टे की वैधता की जांच करने का कोई अवसर नहीं था। राज्य द्वारा उन कार्यवाहियों में उस पर हमला भी नहीं किया गया था और उन कार्यवाहियों में उस पर हमला भी नहीं किया जा सकता था क्योंकि स्वामित्व के मुद्दे पर विचार नहीं किया जा सका था। राजस्व न्यायालय इस संबंध में, **हम गुजरात राज्य बनाम पाटिल राघव नाथ और अन्य (सुप्रा.)** के मामले में निर्णय का संदर्भ उपयोगी रूप से ले सकते हैं। जिसमें इसे माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा निम्नानुसार माना गया है:

> "**14.** हमारा यह भी मानना है कि आयुक्त को मालिकाना हक के प्रश्न पर नहीं जाना चाहिए था। हमें ऐसा लगता है कि जब किसी पक्ष द्वारा जिलाधीश या आयुक्त के समक्ष किसी कब्जेदार के स्वामित्व पर विवाद किया जाता है और विवाद गंभीर है तो जिलाधीश या आयुक्त के लिए उचित कदम यह होगा कि पक्षों को सक्षम न्यायालय में भेजा जाए न कि निर्णय लिया जाए। कब्जाधारी के विरुद्ध स्वत्वाधिकार का प्रश्न।"

40. उपरोक्त सुसंगत दृष्टिकोण रहा है जैसा कि **कच्छी लाल रामेश्वर आश्रम ट्रस्ट और अन्न क्षेत्र ट्रस्ट के माध्यम से वेल्जी देवशी बनाम एवं जिलाधीश हरिद्वार और अन्य**

(सुप्रा.) के मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय के निर्णय से स्पष्ट होगा में यह निम्नानुसार अभिनिर्धारित किया गया था:

> "**25.** यह सिद्धांत कि कानून आसानी से भागने के दावे को स्वीकार नहीं करता है और जिम्मेदारी उस व्यक्ति पर बहुत अधिक निर्भर करती है जो यह दावा करता है कि एक व्यक्ति बिना वसीयत के मर गया है, और संपत्ति पर उत्तराधिकार के लिए योग्य कोई कानूनी उत्तराधिकारी नहीं बचा है, एक ठोस तर्क पर आधारित है। एस्केट एक सिद्धांत है जो राज्य को एक सर्वोपरि संप्रभु के रूप में मान्यता देता है जिसमें संपत्ति केवल उत्तराधिकारियों की विफलता के स्पष्ट और स्थापित मामले पर ही निहित होगी। यह सिद्धांत इस मानदंड पर आधारित है कि कानून के शासन द्वारा शासित समाज में, न्यायालय यह नहीं मानेगी कि निजी स्वामित्व को राज्य के पक्ष में एक शासी के आधार पर स्पष्ट मामले के अभाव में अधिरोहित किया गया है। राज्य के प्रशासनिक अधिकारियों को- जिलाधीश सहित, जैसा कि वर्तमान मामले में है- नागरिक विवादों से जुड़े स्वामित्व के मामलों पर निर्णय लेने की अनुमति देना कानून के शासन के लिए विनाशकारी होगा। जिलाधीश राज्य का एक अधिकारी होता है। वह केवल उन्हीं शक्तियों का प्रयोग कर सकता है जो कानून उसे निजी विवादों में करने के लिए विशेष रूप से प्रदान करता है। इसके विपरीत, एक सिविल न्यायालय के पास नागरिक विवादों से जुड़े सभी मामलों पर निर्णय लेने का अधिकार क्षेत्र होता है, सिवाय इसके कि जहां न्यायालय का अधिकार क्षेत्र, स्पष्ट रूप से या आवश्यक निहितार्थ द्वारा, क़ानून द्वारा छीन लिया जाता है। यह मानते हुए कि जिलाधीश ने वर्तमान मामले में अधिकार क्षेत्र के बिना काम किया है, न्यायालय के लिए यह आवश्यक नहीं है कि वह संपत्ति के उस अधिकार को मान्य करे जिस पर याचिकाकर्ता ने दावा किया है न्यायालय को यह तय करने के लिए नहीं बुलाया गया है कि ट्रस्ट द्वारा पैंतालीस वर्षों से अधिक समय से दावा किया गया कब्ज़ा एक विश्वसनीय पट्टा-विलेख द्वारा समर्थित है या नहीं। आवश्यक बात यह है कि इस तरह का न्यायिक कार्य जिलाधीश द्वारा अपने ऊपर नहीं थोपा जा सकता था। उपाधियों पर निर्णय के लिए नागरिक प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 9 के तहत सक्षम क्षेत्राधिकार वाली न्यायालय के सामान्य नागरिक क्षेत्राधिकार का सहारा लेना चाहिए।"

41. 1956 के अधिनियम की धारा 259 इस स्थिति को निम्नलिखित शब्दों में स्पष्ट करती है:

> "**259. सिविल न्यायालयों के क्षेत्राधिकार को बाहर रखा गया है-** कोई भी मुकदमा या अन्य कार्यवाही, इस अधिनियम के तहत उत्पन्न होने वाला और इसके लिए प्रदान किया गया कोई भी मामला जब तक कि अन्यथा इस अधिनियम या किसी अन्य अधिनियम या कानून में किए गए किसी स्पष्ट प्रावधान द्वारा अन्यथा लागू न हो, किसी भी सिविल न्यायालय में इसके संबंध में झूठ या संस्थित नहीं की जाएगी।:
> **बशर्ते** कि, यदि सीमा विवाद या संपत्ति-धारकों के बीच किसी अन्य विवाद

> में, स्वामित्व का प्रश्न शामिल है, तो ऐसे प्रश्न के निर्णय के लिए एक नागरिक मुकदमा लाया जा सकता है।

इसलिए, यह स्पष्ट है कि किसी भी प्रकार के स्वामित्व से जुड़े विवाद का निर्णय केवल सिविल न्यायालय द्वारा किया जा सकता है और उक्त मुद्दे पर निर्णय करना राजस्व अदालतों के अधिकार क्षेत्र से बाहर है।

42. आगे ऐसा प्रतीत होता है कि जब इस न्यायालय के समक्ष रिट याचिका दायर की गई थी, तो प्रत्यर्थी संख्या 1- रिट याचिकाकर्ता ने 1942 के आधार पर इसके पट्टा-विलेख का पता लगाने की मांग की थी, जिसमें कहा गया था कि बिसाऊ ने इसे मंजूरी दे दी थी। राज्य ने जानकारी के अभाव में उन तथ्यों को नकार दिया। हालाँकि, यह ऐसा मामला नहीं था जो राजस्व बोर्ड द्वारा पारित आदेश से उत्पन्न रिट याचिका में सीधे या पर्याप्त रूप से विचार के लिए उठा हो, विद्वान एकलपीठ ने कुछ ऐतिहासिक पृष्ठभूमि को ध्यान में रखते हुए इस पहलू की जांच की है। हमारी सुविचारित राय में, इस न्यायालय के लिए ठाकुर रघुवीर सिंह की कानूनी स्थिति से संबंधित पहलू पर ध्यान देना और यह तय करना बिल्कुल भी आवश्यक नहीं था कि वह ठिकानेदार/शासक थे या जागीरदार/बिस्वेदार थे। 1942 के पट्टे की वैधता की जांच करना अनावश्यक था। यह वास्तव में भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 और 227 के तहत एक याचिका में इस न्यायालय द्वारा निर्णय लेने की आवश्यकता वाला मुद्दा नहीं था क्योंकि यह राजस्व अदालतों के विचार के लिए कभी नहीं आया था। इस तरह की जांच केवल विधिवत गठित कार्यवाही में ही की जा सकती है, या तो 1942 के पट्टे के हस्तांतरणकर्ताओं या उसके हित में उत्तराधिकारियों द्वारा उनके पट्टा-विलेख के आधार पर घोषणा की मांग करते हुए सिविल मुकदमा दायर करके या किसी अन्य पक्ष द्वारा 1942 के पट्टे के खिलाफ अवैध और निष्क्रिय के रूप में घोषणा की मांग की जा सकती है। इस पर केवल विधिवत गठित सिविल मुकदमे में ही विचार किया जा सकता था, अन्यथा नहीं, राजस्व न्यायालय, अर्थात राजस्व बोर्ड के समक्ष तो और भी कम।

43. वास्तव में, न तो राजस्व बोर्ड और न ही अपर जिलाधीश ने स्वामित्व के मुद्दे की जांच की, जाहिर है, इस कारण से कि वे ऐसा नहीं कर सके। हालाँकि, भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 और 227 के तहत रिट याचिका दायर करके 25.04.2003 को राजस्व बोर्ड द्वारा पारित आदेश की वैधता को चुनौती देते हुए, पार्टियों द्वारा बिना किसी विशिष्ट विवरण के अस्पष्ट दलीलें दी गईं। हालाँकि, ऐसा प्रतीत होता है कि बहस के दौरान, पट्टा-

विलेख का विवादास्पद मुद्दा, सामग्री के बिना, विद्वान एकलपीठ के समक्ष उठाया गया था। यह वह स्थिति नहीं थी जहां सक्षम कार्रवाई के एक सिविल न्यायालय के समक्ष पूर्ण सुनवाई के बाद, स्वामित्व के मुद्दे का निर्णय पार्टियों की दलीलों, न्यायालय के समक्ष पेश किए गए मौखिक और दस्तावेजी साक्ष्यों के आधार पर किया जाता था। था. पट्टा-विलेख, 1942 के पट्टे की वैधता, ठाकुर रघुवीर सिंह की कानूनी स्थिति के संबंध में मुद्दा, सभी विद्वान एकलपीठ के समक्ष बहस के दौरान विकसित हुए, जिनका उत्तर विद्वान एकलपीठ ने दिया। यही कारण है कि अपीलार्थी-राज्य ने इस अपील को दायर करते समय आदेश 41 नियम 27 सीपीसी के सादृश्य पर एक आवेदन दायर करके कई नए तथ्यों, दस्तावेजों को सामने रखा और इस न्यायालय से यह जांच करने के लिए कहा कि क्या ठाकुर रघुवीर सिंह ठिकानेदार/शासक था या वह केवल एक जागीरदार/बिस्वेदार था और इसलिए, जयपुर के महाराजा की सरकार के राजस्व विभाग के दिनांक 08.06.1945 की राजपत्र अधिसूचना द्वारा अधिसूचित आदेश से बंधा हुआ था। इस मुद्दे पर निर्णय के लिए दलीलों, मौखिक और दस्तावेजी सबूतों की आवश्यकता थी क्योंकि किसी न किसी तरह से इस निष्कर्ष पर नहीं पहुंचा जा सका कि ठाकुर रघुवीर सिंह ठिकानेदार/शासक थे या जागीरदार/बिस्वेदार थे। इसके अलावा, वह जांच केवल तभी की जा सकती है जब 1942 के पट्टे को उचित रूप से गठित कार्यवाही में इस आधार पर प्रश्न में बुलाया जाता है कि विलेख (1942 का पट्टा) शुरू से ही शून्य था और संपत्ति पर वैध पट्टा-विलेख, स्वामित्व या हित को स्थानांतरित करने में असमर्थ था। विवाद में इस कारण से कि ठाकुर रघुवीर सिंह के पास 1942 के पट्टे को निष्पादित करने का कोई अधिकार नहीं था। यदि अंततः, यह माना जाए कि 1942 के पट्टे ने हस्तांतरितियों, अर्थात, सेठ पाली राम और बृज लाल, अन्य सभी के पक्ष में वैध पट्टा-विलेख प्रदान किया था 1945 के अधिनियम, खेतड़ी राजस्व मैनुअल, 1947 के अधिनियम, 1947 के जयपुर भूमि राजस्व अधिनियम, 1952 के अधिनियम, 1955 के अधिनियम और 1956 के अधिनियम के लागू होने के बाद होने वाले कानूनी परिणामों के संबंध में प्रश्न उठेंगे। यदि 1942 के पट्टे को कानून में शून्य या निष्क्रिय माना जाता है, तो विभिन्न क़ानूनों और उनमें निहित प्रावधानों के कार्यान्वयन से पूरी तरह से अलग-अलग कानूनी परिणाम सामने आएंगे, जैसा कि ऊपर बताया गया है।

केवल उस मामले में जहां विधिवत गठित सिविल मुकदमे में कानून की उचित घोषणा इस आशय की दी गई है कि ठाकुर रघुवीर सिंह के पास कोई पट्टा-विलेख नहीं था

जिसे वह सेठ पाली राम और बृज लाल के पक्ष में वैध रूप से पारित कर सके और कोई वैध पट्टा-विलेख हस्तांतरित नहीं किया गया था। हस्तांतरितियों के पक्ष में, राजस्व अधिकारियों के पास यह निर्णय लेने का अधिकार होगा कि 1955 के अधिनियम की धारा 16 (i) में निहित प्रावधानों सहित विभिन्न किरायेदारी कानूनों में निहित प्रावधानों को ध्यान में रखते हुए, खातेदारी अधिकार किसके पक्ष में अर्जित होंगे हस्तांतरितियों और परिणामस्वरूप, हित में उत्तराधिकारी पर, अर्थात प्रत्यर्थी संख्या 1- रिट याचिकाकर्ता-ट्रस्ट।

44. यहां ऊपर हमारे विस्तृत विचार के मद्देनजर, हम मानते हैं कि विद्वान एकलपीठ द्वारा पारित आदेश, जिस हद तक ठाकुर रघुवीर सिंह की कानूनी स्थिति, 1942 के पट्टे की वैधता और वैधता तय करता है, कानून में अस्थिर है और इसके लिए लागू नहीं होगा या किसी भी पार्टी के खिलाफ पार्टियां कानून के तहत उनके लिए उपलब्ध उपाय अपनाने के लिए स्वतंत्र होंगी।

45. चूंकि हमने माना है कि खातेदारी अधिकारों के संबंध में की गई प्रविष्टियों को अपर जिलाधीश द्वारा दिनांक 17.07.1993 के आदेश के तहत शुरू की गई संदर्भ कार्यवाही के माध्यम से अपास्त करने का निर्देश नहीं दिया जा सकता है, जो बोर्ड द्वारा पारित आदेश दिनांक 25.04.2003 में समाप्त हुई। हम राज्य सरकार पर यह भी छोड़ते हैं कि यदि वह सहायक भूमि बंदोबस्त अधिकारी-सह-सहायक भूमि रिकॉर्ड अधिकारी द्वारा पारित दिनांक 28.06.1980 के आदेश की वैधानिकता और वैधता को चुनौती देने का इरादा रखती है, तो वह कानून के तहत उसके लिए उपलब्ध ऐसे उपाय करेगी। जहाँ तक, राजस्व आयुक्त द्वारा पारित आदेश दिनांक 07.11.1983 तथा राजस्व आयुक्त द्वारा पारित आदेश दिनांक 26.08.1988 का संबंध है, अपर जिलाधीश द्वारा दिनांक 17.07.1993 के आदेश के तहत शुरू की गई संदर्भ की एकलपीठ कार्यवाही के निष्कर्षों और क्षेत्राधिकार संबंधी दोष से पीड़ित राजस्व बोर्ड द्वारा पारित आदेश दिनांक 25.04.2003 को बरकरार रखा गया है।

46. परिणामस्वरूप, ऊपर बताए अनुसार तरीके और सीमा तक अपील को आंशिक रूप से अनुमति दी जाती है, लागत के संबंध में कोई आदेश नहीं दिया जाता है।

(शुभा मेहता), न्यायमूर्ति (मनीन्द्र मोहन श्रीवास्तव), न्यायमूर्ति

MANOJ NARWANI/

टिप्पणी: इस निर्णय का हिन्दी अनुवाद निविदा फर्म **राजभाषा सेवा संस्थान** द्वारा किया गया है, जिसे फर्म के निदेशक डॉ. वी. के. अग्रवाल, द्वारा मान्य और सत्यापित किया गया है।

अस्वीकरण: यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का मूल अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन व कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।